○ प्रकाशक
उमेश प्रकाशन
५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-६
○ मुद्रक
हरिहर प्रेस
चावड़ी बाजार, दिल्ली
○ आवरण-मुद्रक
परमहंस प्रेस
दरियागंज, दिल्ली
○ संस्करण
१६६६
○ आवरण-चित्र
जगदीश चड्ढा
○ भावचित्र
हरिपाल त्यागी
○ मूल्य
२ रुपये ५० पैसे

SANT KABEER (Novel for Juveniles)
by
Ram Krishna Sharma
Rs. 2.50

अगर आप सोचते हैं कि बच्चों के अच्छे उपन्यास हिन्दी में नहीं हैं, तो निश्चय ही आपको हमारी किशोरों के लिए उपयोगी पुस्तकें पढ़ने या देखने का अवसर नहीं मिला है। एक-दो या चार-दस नहीं, बल्कि ६० से भी ज्यादा किशोर-उपन्यास हम प्रकाशित कर चुके हैं, आगे और प्रकाशित करने जा रहे हैं।

विषय भी हमने अनेक चुने हैं। ऐतिहासिक नायक-नायिकायें, 'अरब की रातों' के राजा-रानी, ज्ञान-विज्ञान का अनोखापन, रामायण और महाभारत के पात्र, राष्ट्र और विभिन्न धर्मों के नायक, शिकार की रोमांचकारी घटनाएं, प्रख्यात साहित्यकारों का जीवन और शेक्सपियर के नाटकों के रूपान्तर—कोई भी तो विषय ऐसा नहीं, जिसकी जानकारी निहायत दिलचस्प उपन्यासों के माध्यम से न दी गई हो। बच्चे तो बच्चे, बच्चों के माता-पिता भी अगर इन्हें ले बैठें तो पढ़ते ही रह जाएं।

ये किशोर-उपन्यास नवसाक्षरों तथा अहिन्दी-भाषी पाठकों के लिए भी समान रूप से उपयोगी हैं।

राष्ट्र के नए नागरिकों का निर्माण—यही है किशोर-उपन्यास-माला का उद्देश्य।

प्रस्तुत पुस्तक संत कबीर के त्यागमय एवं प्रेरणाप्रद जीवन पर आधारित है।

शेक्सपियर के नाटकों पर आधारित

तूफान	हैमलेट	भूल पर भूल
मैकबेथ	राजा लियर	रोमियो जूलियट
जूलियस सीजर	राई से पहाड़	वेनिस का सौदागर
ऑथेलो	निराशा	जैसा तुम चाहो

शिकार, ज्ञान-विज्ञान, 'अरेबियन नाइट्स' पर आधारित

उड़ने वाला घोड़ा

दैत्याकार पक्षी का शिकार	हाथी का शिकार	अलीबाबा : चालीस चोर
रूपा और लल्ली	बाघ का शिकार	मगरमच्छ का शिकार
ह्वेल का शिकार	पूपू	अरब के मसखरे

साहसिक कहानियां

रंग बिरंगी परियां
हमारे बहादुर जवान
हमारे बहादुर हवाबाज
विश्व की साहसिक गाथाएं
देश-देश की परियां भारत आई
भारत के साहसी वीरों की गाथाएं
शिकार की रोमांचकारी सच्ची गाथाएं
साहस-रोमांच की सच्ची गाथाएं
साहसी समुद्री वीरों की सच्ची गाथाएं
नेफा और लद्दाख के साहसी वीरों की गाथाएं

उमेश प्रकाशन, दिल्ली

५

राम-नाम की लूट है…

जाड़े का मौसम बीत रहा था और गर्मी शुरू होने वाली थी। मौसम बड़ा सुहावना हो गया था। एक सुहानी शाम। चौदह-पन्द्रह वर्ष का एक किशोर हाथ में कटोरी लिए, दुनिया से बेखबर अपनी ही धुन में मस्त, काशी की एक गली में गाता हुआ जा रहा था :

राम नाम की लूट है, लूट सके तो लूट।
अन्त समय पछताएगा, जब पेंठ जाएगी ऊठ ॥

गानेवाले के कण्ठ में लोच था और स्वर में माधुर्य। आस-पास चलते हुए लोगों की निगाहें बरबस उसकी ओर उठ जाती थीं। वे पलभर ठिठककर उसके पद सुनते, फिर अपनी राह लग जाते।

एक अधेड़ स्त्री थाली में थोड़ा-सा आटा लेकर किशोर को भिक्षा देने के लिए खड़ी थी। अगले दरवाजे पर भी एक वृद्धा आटा लेकर खड़ी थी। दूर से राम-नाम का भजन सुनकर गली की इन धर्मप्राण नारियों ने यही समझा कि कोई साधु आ रहा है। वे भिक्षा देने के लिए पहले ही दरवाजे पर आ गई थीं और उस किशोर के कण्ठ से निकले मधुर पद सुन रही थी। किशोर ने प्रौढ़ा की ओर देखा। उसके होंठों पर मुस्कान आ गई।

"मां, मैं भिक्षा नहीं लेता। उसने सिर झुकाकर कहा और

आगे बढ़ गया।

उसकी बात अगले दरवाजे पर खड़ी वृद्धा ने भी सुन ली। किशोर के निकट आते ही वह बोली, "कैसे साधु महाराज हो! भिक्षा नहीं लेते, तो क्या पैसे लेते हो? कहीं मन्दिर बनवा रहे हो, महाराज?"

"नहीं, मां! मैं पैसे भी नहीं लेता। मैं साधु नहीं हूं।" किशोर ने उत्तर दिया।

"साधु नहीं हो, तो फिर गाते क्यों हो? हाथ में कटोरा क्यों है?" वृद्धा ने आश्चर्य से पूछा।

"मैं तो इस गली के लोगों में राम का नाम लुटवा रहा हूं, मां! तुम भी लूटो। दुनिया लूटे।"

उधर से एक हट्टा-कट्टा पण्डा गुजर रहा था। उसके पीछे उसका ताबेदार एक कहार चल रहा था। वृद्धा और किशोर की बातें सुनकर वे भी उत्सुकतावश रुक गए थे।

"तो फिर पेट कैसे भरते हो, बालक?" पण्डे ने किशोर के कंधे पर थपकी देकर व्यंग्य से पूछा।

किशोर ने उसकी ओर देखा। मुद्रा से स्पष्ट दीख रहा था कि पण्डे को किशोर की बातों पर विश्वास नहीं आ रहा है। किशोर ने तत्काल उत्तर दिया, "अपने हाथों से मेहनत करके कमाता-खाता हूं, महाराज! राम-नाम नहीं बेचता।"

पण्डा समझ गया कि उसी पर आक्षेप किया जा रहा है। उसने मुंह बनाकर पूछा, "हाथों से कौन-सी मेहनत करते हो, पुत्र? घास छीलते हो क्या?"

"नहीं, कपड़ा बुनता हूं।" किशोर ने दृढ़ता से उत्तर दिया।

पण्डा हकबकाकर पीछे हट गया, "क्या तुम जुलाहे हो?"

"हां।"

"तुम्हारा नाम?"

'कबीर !'

"क···बी· र," पण्डे ने कुछ याद-सा करते हुए फिर पूछा, "तुम्हारे बाप का नाम ?"

"नीरू जुलाहा।"

"तुम तो मुसलमान हो ?"

"न मैं हिन्दू हूँ, न मुसलमान !"

"झूठ कहीं का ! तू मुसलमान है।" पण्डा आगबबूला होकर बोला, "तूने मुसलमान होकर भी मुझे छू दिया, नीच !"

"मैंने आपको कहाँ छुआ, महाराज ?" कबीर ने उसी तरह से कहा, "आपने तो स्वयं ही मेरे कंधे पर हाथ रखा था। आपने कहा ही कितने कि···"

कबीर पूरी बात कह भी न पाया था कि पण्डे ने कसकर एक थप्पड़ उसके गाल पर जमा दिया ; बोला, "हमारे मुँह लग है, अधम ! नीच !"

कबीर का सिर झनझना उठा। उसने पण्डे की ओर रोष पूर्वक देखते हुए कहा, "महाराज, गरीब पर हाथ उठाना अच्छा नहीं होता। मरी खाल की हाय से लोहा भी भस्म हो जाता है।"

"हमें सीख देने चला है, नीच !" पण्डे ने फिर एक थप्पड़ मारा और पीछे मुड़कर कहार से बोला, "देखता क्या है रे, बिछा दे !"

पण्डे की आज्ञा सुनते ही कहार आगे बढ़ा और उसने खींच-कर एक लाठी कबीर के सिर पर दे मारी। कबीर वहीं पर गिर पड़ा। सिर से खून बहने लगा। कहार ने ऊपर से कबीर की पीठ पर एक लाठी और जड़ दी।

पण्डेने अकड़कर सीना फुलाया और फिर जमीन पर लहू-लुहान पड़े कबीर की ओर हिकारत-भरी नजर डालकर आगे बढ़ गया।

.. खड़ी दोनों स्त्रियाँ अवाक् होकर यह सब दे

पण्डे के आगे बढ़ते ही वृद्धा जोर से बोली, "महाराज, आप तो पण्डा नहीं, कसाई हो। एक नादान निहत्थे बालक पर हाथ उठाते शर्म नहीं आई ?"

"बुढ़िया !" पण्डे ने पलटकर वृद्धा की ओर आंखें तरेरते हुए कहा, "उस मुसलमान ने मुझे छूकर मेरा धर्म भ्रष्ट कर दिया। अभी मुझे जाकर गंगास्नान करना पड़ेगा। मारता नहीं तो क्या उसकी पूजा करता ? जानती हो मैं कौन हूं ? काशीनाथ पण्डा।"

'पण्डा नहीं गुण्डा !" दूसरे दरवाजे पर खड़ी अधेड़ स्त्री ने मुंह बनाकर कहा और खट् से दरवाजा बन्द कर दिया।

"हाय-हाय ! कितना खून बह गया बेचारे का !" बुढ़िया की आंखें भर आईं। उसने घर की ओर मुंह करके जोर से पुकारा, "अरे विश्वम्भर !···ओ विश्वम्भर ! इधर आना बेटे, जल्दी से। हाय, उस कसाई ने मार ही डाला बेचारे को।"

तभी गेरुआ वस्त्र पहने, हाथ में रुद्राक्ष माला लिए राम-नाम जपते एक स्वामीजी उधर से गुजरे। रास्ते में खून से तर किशोर को बेहोश पड़ा देख वे ठिठक गए।

"हरे राम, हरे राम !' स्वामीजी ने बैठकर कबीर का माथा छुआ, फिर वृद्धा की ओर देखकर पूछा, "इसे किसने मारा, माता ?"

"एक कसाई पण्डे ने।" वृद्धा ने उत्तर दिया, "देखो न, कितना खून बह गया ! बेहोश है बेचारा ! स्वामी जी, इसे अच्छा कर दो। बहुत पुन्न कमाओगे। यह भी राम का भक्त है।"

स्वामीजी वहीं पर पलथी मारकर बैठ गए। उन्होंने कबीर का सिर उठाकर अपनी गोद में रख लिया। तभी विश्वम्भर बाहर आ गया।

"बेटा, थोड़ा जल लाओ !" स्वामीजी ने उससे कहा।

विश्वम्भर पानी लेने अन्दर चला गया। स्वामीजी ने अपना राम-नामी दुपट्टा एक किनारे से फाड़ा और कबीर के सिर से

बहता खून पोंछने लगे।

विश्वम्भर भरा लोटा लेकर आ गया। स्वामीजी ने पानी अंजुली में ले-लेकर कबीर के मुंह पर छींटे मारे। फिर उसका मुंह खोलकर थोड़ा पानी डाला। गले में पानी पड़ते ही कबीर कराहा।

स्वामीजी और उनके आसपास खड़े लोगों के मुह पर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। उन्होंने थोड़ा और पानी उसके मुंह में डाला और फटे कपड़े को गीला कर खून साफ किया। फिर दुपट्टे से एक टुकड़ा फाड़कर पट्टी बांध दी।

कुछ ही क्षण बाद कबीर की चेतना लौट आई। उसने आंखें खोलकर चारों ओर देखा। अंधेरा काफी बढ़ गया था। वह कुछ न देख सका।

"अब कैसा जी है, बेटे ?" स्वामीजी ने पूछा।

स्वामीजी की गुरु-गम्भीर वाणी कबीर ने पहचान ली। वह उठ बैठा और स्वामीजी के चरणों में सिर टेककर बोला, "गुरुदेव, इस अधम दास का प्रणाम स्वीकार कीजिए !"

स्वामीजी हंस पड़े ; बोले, "मैं तेरा गुरु कैसे हुआ, रे ?"

"आप ही मेरे जनम-जनम के गुरु हैं और अब जीवनदाता भी।" कबीर ने उसी प्रकार सिर टेके-टेके उत्तर दिया, "और मैं आपका शिष्य कबीर हूं।"

"कबीर !" स्वामीजी चौंककर खड़े हो गए "नीरू जुलाहे का लड़का ! तू तो एक बार पहले भी आया था न ?"

"हां, गुरुदेव ! गुरुमन्त्र की दीक्षा लेने आपके पास आया था।" कबीर ने उत्तर दिया, "और जब आपने मुझे खाली हाथ लौटा दिया, तो निराश होकर मैं इसी दुःख में डूबा सारी रात गंगा-घाट की सीढ़ियों पर लेटा रहा। सुबह जब आप आए, तब आपका पैर मेरे सिर पर पड़ गया था ! आपने कहा था 'हरे राम ! हरे राम !' बस, मैंने उसे ही गुरुमन्त्र मान लिया।"

"लेकिन, मैंने तो तुझे अपना शिष्य बनाने से इन्कार कर दिया था। तू मेरा शिष्य नहीं बन सकता।"

"मैं जुलाहा हूं, इसलिए ? मैं मुसलमान हूं न ?" कबीर ने रुआंसा होकर कहा, "और महाराज, अब इतनी रात को ठण्ड में भी आपको नहाना पड़ेगा। मुझ अधम को छू जो लिया है आपने।"

"कबीर !" स्वामीजी ने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा, 'धर्म और जात-पांत से भी बड़ी होती है मानवता। मैंने एक अचेतन मानव की चेतना लौटाई है और इससे मुझे प्रसन्नता हुई है। मैंने मानव-धर्म निभाया है। तू उस समय न मुसलमान था और न हिन्दू, केवल अर्द्ध-मृतावस्था में पड़ा एक मानव था, और मैंने उसी अर्द्ध-मृत मानव की प्राण-ज्योति लौटाई है। वह मानव-धर्म था; वही मैंने निभाया है। अब अपना हिन्दू-धर्म निभाऊंगा—गंगास्नान अवश्य करूंगा।"

स्वामीजी तेजी से घाट की ओर चल दिए। ये स्वामीजी थे—वेदान्त के धुरंधर ज्ञाता स्वामी रामानन्द।

२

अवधू, माया तजी न जाय...

घर के दरवाजे को खटखटाकर कबीर ने जोर से पुकारा, "मां !" उसकी मां नीमा अंधेरे घर में बड़ी देर से प्रतीक्षा कर रही थी। कबीर की आवाज सुनते ही वह जल्दी से दरवाजा खोलने उठी।

"बड़ी देर लगा दी तूने रे, कबीरा !" दरवाजा खोलते हुए नीमा ने कहा, "इतनी रात कर दी ? तेरे कारण घर में दिया-बत्ती तक न कर पाई। कहां रुक गया था रे, पगले ?"

कबीर हंस पड़ा, "मां, आज एक भिड़न्त हो गई।"

"भिड़न्त ! किससे उलझ पड़ा था ?" नीमा ने पूछा।

"मैं नहीं उलझा, मां, वही मुझसे आ उलझा। और सुनो, एक मजेदार बात बताऊं।" कबीर ने आंगन में आकर कहा।

एकाएक उसे याद आ गया कि उसके सिर पर पट्टी बंधी है। उसने घबराकर नीमा की ओर देखा, कहीं मां, पट्टी तो नहीं देख ली। परन्तु अंधेरे के कारण नीमा पट्टी नहीं देख पाई थी।

कबीर ने चुपके से पट्टी खोल दी और पूछा, "मां, दिया क्यों नहीं जलाया ?"

"कहां से जलाती ?" नीमा ने उत्तर दिया, "तुझे तेल ही लेने तो भेजा था न ! लाया ?"

"अरे ! तेल तो मैं बिल्कुल भूल ही गया, मां ! अभी लाया।"

कबीर को अब याद आया कि उसे बाजार क्यों भेजा गया था।

"रहने दे अब।" मां ने नाराज होकर कहा, "इतनी रात गए कहां जाएगा? हर बात भूल जाया करता है। तुझसे तो कुछ भी मंगाना या कहना बेकार है। कटोरी कहां है?"

कबीर सकपकाया—कटोरी तो वह उसी गली में खो आया था; हंसता हुआ बोला, "अरी मां, तू ही तो कहती है कि तेरा कबीरा पगला है। बस, पागल तो भुलक्कड़ होते ही हैं।"

"हां, हां, पागल तो है ही तू। चल, हाथ-मुंह धो ले। मैं चूल्हा जलाती हूं, उसी की रोशनी में खा लेना।" मां ने झिड़का।

कबीर हंसता हुआ बाहर चला गया। उसने अंधेरे में ही टटोलकर लोटा ढूंढा। पानी भरकर हाथ-मुंह धोया। फिर अन्दर आ बैठा।

"लोई आई थी।" नीमा ने थाली उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा।

"हूं।"

"तेरे लिए चटनी भी लाई थी। बड़ी देर तक इन्तजार करती रही बेचारी। फिर घर चली गई।" नीमा ने कहा।

कबीर चुप रहा।

"वह तेरा बड़ा खयाल रखती है।" नीमा फिर बोली, "सोचती हूं कि उसके अब्बा से बात करूं।"

कबीर चुपचाप खाता रहा।

"चुप क्यों है रे, बोलता क्यों नहीं?" नीमा ने उसकी चुप्पी से नाराज होकर कहा, "करूं उसके अब्बा से बात···लोई से तेरे विवाह की?"

"मैं विवाह नहीं करूंगा, मां!" कबीर ने मुंह खोला।

"क्यों?"

"मां, हम गरीब हैं। अपना ही गुजारा नहीं चला सकते।

३
कबिरा खड़ा बजार में

जुमेरात का दिन था। काशी के बकरी मुहल्ले में उस दिन पैंठ लगती थी। काशी और आसपास के देहात के तमाम जुलाहे उस पैंठ में आकर कपड़ा बेचा करते थे। इसके अलावा घरेलू जरूरत की चीजें भी पैंठ में बिकने आती थीं।

नीमा सवेरे ही उठ गई। जल्दी से चूल्हा जलाकर उसने कबीर को भी उठा दिया; कहा, "बेटे, जल्दी हाथ मुह-धो ले, पैंठ में जाना है।"

हफ्ते में यही एक दिन होता था, जिस दिन सप्ताह-भर के लिए रोटी कमाई जाती थी। कबीर उठा। तैयार होकर उसने मां की बनाई हुई जौ-चने की नमकीन रोटियां खाईं और कपड़ों की पोटली कधों पर डालकर पैंठ की ओर चला गया।

दोपहर बाद एक ग्राहक आया और कबीर से एक थान का भाव करने लगा, "क्या लोगे?"

"पांच टके।"

"तीन लोगे?"

"नहीं।"

ग्राहक चला गया। शाम तक दो-चार ग्राहक और आए, पर किसी के साथ सौदा न पटा। बाकी सभी अपना-अपना सामान बेचकर खुश-खुश लौट रहे थे। एक कबीर ही ऐसा था, जिसका कोई सौदा न बिका था।

कबीर की यह हालत देखकर एक बूढ़ा दलाल उसके पास

आया ; बोला, "ऐ छोकरे ! मैं तेरा यह माल बहुत जल्दी बेच सकता हूं। बोल, मुझे क्या दलाली देगा ?"

कबीर निराश हो चुका था। उसे मालूम था कि घर में न अनाज है, न नमक। रोटी का कोई ढंग नहीं। पूरा हफ्ता कैसे कटेगा ? वह गुमसुम बना रहा।

दलाल ने सोचा, यह छोकरा नया-नया ही आया है। दुकानदारी जानता नहीं। खुद ही इसका कपड़ा बेचकर अपनी दलाली क्यों न ले लूं ! यह कुछ भी नहीं बोलेगा, बल्कि पैसे पाकर खुश ही होगा।

कबीर एक तरफ खड़ा होकर देखने लगा। दलाल ने तरह-तरह की आवाजें लगाकर बात की बात में ग्राहकों की भीड़ की जुटा ली। ग्राहक दाम पूछते तो दलाल एक के चार बताता और दो पर सौदा तै हो जाता। देखते ही देखते कबीर का सारा माल खत्म हो गया।

कबीर को उसका माल बेचने का ढंग देखकर बहुत ग्लानि हुई। वह बोला, "दादा, आप बुजुर्ग हैं, मगर मुझे आपकी यह बात कुछ जंची नहीं।"

"जंची नहीं ?" बूढ़े दलाल ने कुछ क्रोध और कुछ खिन्नता से कहा, "क्यों भला ?"

"जिस काम में झूठ का सहारा लेना पड़े, वह काम नहीं दादा, ठगी है ठगी।' कबीर ने कहा :

"सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे सांच है, ताके हिरदे आप॥"

दलाल को कबीर का यह उपदेश पसन्द नहीं आया ; बोला, "...अभी तुम बच्चे हो। जब बड़े हो जाओगे, तब मालूम ...गा कि झूठ बराबर तप नहीं या सांच बराबर...मैंने ये ... में सफेद नहीं किए। तेरे जैसे सांचाधारी बनने वाले

सब कोठरियों में ही पड़े हैं। और मैंने व्यापार से ही कई मकान खड़े कर लिए हैं, इसी काशी में। जा, मुझे कभी उपदेश मत देना, समझे ?"

"दादा, ये मकान तुम्हारे साथ नहीं जाएंगे।" कबीर ने कह

कबीर को बूढ़े दलाल के काम और विचारों पर बड़ा दु हुआ। वह रास्ते-भर उसी के बारे में सोचता रहा।

घर पहुंचते ही कबीर ने सारे पैसे अपनी मां को दे दिए।

नीमा ने पिछले सप्ताह लोई के बाप तकी से कुछ उधार लिया था। कबीर के आते ही वह उसके पैसे लौटाने चल दी।

नीमा कई बार सोच चुकी थी कि लोई के बाप से कबीर और लोई के विवाह की बात करे। कभी लोई के बाप और कबीर के बाप में बहुत घनिष्ठ मित्रता थी। लोई के बाप ने वादा किया था कि वह अपनी लड़की का विवाह कबीर से ही करेगा। परन् यह तब की बात है जब कबीर का बाप जिन्दा था। उसके मरते ही घर की हालत बिगड़ गई थी। कबीर ने कभी घर संभालने की चिन्ता ही नहीं की; इसीलिए अब नीमा को डर था कि कहीं लोई का बाप अपनी जबान से मुकर न जाए। तब तो बड़ी हेठी होगी। यही सोचकर वह चुप रह जाती।

आज उसने ठान ली थी कि तकी से लोई और कबीर के विवाह की बात जरूर चलाएगी। देखें, लोई का बाप अपनी जबान का पक्का है या नहीं।

४

नाता, गोता, कुल, कुटुम···

लोई का बाप तक्को भी जुलाहा था और उसका घर भी उसी मुहल्ले में था। लोई विवाह करने लायक हो चली थी। लेकिन कबीर के बाप नीरू के मर जाने के बाद उसके घर की हालत बिगड़ती देख अब उसे साहस नहीं हो रहा था कि वह अपनी इकलौती, बिना मां की बच्ची लोई का विवाह कबीर जैसे लापरवाह और अक्खड़ लड़के से कर दे।

नीमा जब लोई के घर पहुंची तब तक्को करघे पर बैठा हुआ कपड़ा बुन रहा था। नीमा को देखकर बोला, "आओ, कबीर की मां! अरी ओ लोई, जरा पीढ़ा तो ला, देख तेरी ताई आई है।"

"अजी, पीढ़े की क्या जरूरत है?" नीमा बोली, "मैं तो बस, तुम्हारे दो टके लौटाने आई हूं। अभी सारा काम पड़ा है।"

"आ जाते टके," तक्को बोला, "इनकी क्या जल्दी थी? कबीर आज पैंठ गया था न? कितना बेचा आज उसने?"

"आज तो जितना ले गया, सब बेच आया।" नीमा ने खुश होकर उत्तर दिया।

"तब तो बस से सूरज पश्चिम में निकलेगा कबीर की मां!" तक्को ने आश्चर्य [illegible] कोरा ही लौटने [illegible]

५

जाति न पूछो साधु की···

कबीर अपनी धुन का पक्का था। उसने पक्का निश्चय कर लिया था कि वह स्वामी रामनन्द को ही अपना गुरु बनाएगा। वह परम ज्ञानी और वेदान्त के धुरन्धर विद्वान है, मानवता उनमें कूट-कूटकर भरी है। इस युग में वे मानव-धर्म के महान् प्रतिष्ठाता हैं। यदि वे मुझे स्वीकार कर लें तो इस भवसागर से मेरा बेड़ा पार हो जाए। मैं नीच जाति का हूं, क्या इसीलिए वे मुझे नहीं अपनाते ? कबीर यही सोचता और हर रोज प्रातः गऊ घाट की सीढ़ियों पर बैठता।

स्वामी रामानन्द प्रातः सूर्योदय से पहले राम-नाम लेते हुए आते और स्नान करके अपनी कुटिया में लौट जाते। कबीर दूर से ही उन्हें प्रणाम करता। स्वामी रामानन्द रोज उसे देखते, उसका प्रणाम स्वीकार करते, लेकिन कुछ न बोलते। कबीर भी विचलित नहीं हुआ। अन्त में स्वामीजी से न रहा गया। उन्होंने कबीर से पूछा, "तू यहां प्रतिदिन प्रातः क्यों बैठा रहता है वत्स ?"

कबीर ने स्वामीजी के निकट आकर प्रणाम करते हुए उत्तर दिया, "मैं आपसे दीक्षा लेना चाहता हूं, गुरुदेव ! मैं कबीर हूं।"

स्वामी जी कुछ झिझके, फिर बोले, "कबीर, जा अपना धर्म निभा। ताना-बाना डाल। उसी में तेरी मुक्ति है। नेम-धर्म ब्राह्मणों के लिए छोड़ दे।"

"मैं जुलाहा हूं, क्या इसीलिए गुरुदेव मुझे नहीं अपनाते?" कबीर ने सिर नीचा किए हुए दृढ़ता से कहा।

उसके इस प्रश्न से स्वामीजी विचलित हुए; फिर उसे समझाते हुए बोले, "सुनो कबीर, संसार में एक नियमित व्यवस्था होती है, उसका पालन आवश्यक है। तेरा काम कपड़ा बुनना है। तू अपने कर्तव्य का पालन कर।"

"तो क्या यह वर्ण-व्यवस्था अनिवार्य है, गुरुदेव?"

"हां, वत्स! जन्म से ही प्रत्येक व्यक्ति का कार्य निर्धारित है। यदि वह अपना कार्य नहीं करता, तो धर्मच्युत माना जाएगा, क्योंकि अगर उसकी तरह सभी अपना-अपना कार्य छोड़ दें तो अराजकता आ जाएगी। संसार में कोई भी काम नियमित रूप से नहीं हो सकेगा। इसीलिए वर्ण-व्यवस्था की गई है; समझे" स्वामी रामानन्द ने समझाया।

'हां, गुरुदेव! मेरा कार्य निश्चित है। मुझे कपड़ा बुनना है क्योंकि मैं जुलाहा हूं। अगर मेरी तरह सब जुलाहे अपना काम छोड़ दें तो इस संसार के लोग कपड़े कहां से पहनेंगे?" कबीर ने उत्तर दिया।

"तू ठीक समझा कबीर! तू चतुर है।" स्वामीजी ने प्रसन्न होकर कहा।

"लेकिन, गुरुदेव, एक शंका है।"

"बोलो!"

"यदि कोई जुलाहा ताना-बाना डालते हुए भी राम का नाम लेना चाहे, तो क्या उसे नहीं लेना चाहिए?"

"राम का नाम अवश्य लेना चाहिए, चाहे वह जुलाहा हो या ब्राह्मण।" स्वामीजी ने उत्तर दिया।

"तो फिर मैं अपना जुलाहे का कर्तव्य निभाते हुए भी राम-नाम ले सकता हूं?"

स्वामी रामानन्द शान्त हो गए। उन्हें दुःख हुआ कि आज वे धीरज छोड़कर उत्तेजित हो उठे। उन्होंने कहा, "वत्स, मैं पूर्वजों की बनाई व्यवस्था का मात्र पालन-कर्त्ता हूं, उन्हें तोड़ नहीं सकता।"

"गुरुदेव, वर्ण-व्यवस्था जन्म से है। यह शरीर के लिए है या आत्मा के लिए भी?"

"सब आत्माएं एक-समान हैं।"

"तो फिर वर्ण-व्यवस्था केवल शरीर-कर्म के लिए है, आत्मा के लिए नहीं?"

स्वामी रामानन्द इस तर्क से अवाक् रह गए।

कबीर ने फिर कहा, "गुरुदेव, मैं शरीर से जुलाहा ही रहूंगा, अपना कर्म निभाऊंगा। आप मेरी आत्मा को राम-नाम की दीक्षा दें।"

स्वामीजी कबीर के इन अकाट्य तर्कों से स्तम्भित होकर उसकी ओर एकटक देख रहे थे। आज प्रातः ही इतने कुशाग्र, तर्क में श्रेष्ठ बालक से उनका साक्षात्कार हुआ—अवश्य ही यह भी विधि का विधान है। सम्भवतः विधि मेरे हाथों वर्ण-व्यवस्था में यह संशोधन कराना चाहती है।

"चलो, कबीर!" उन्होंने कबीर की बांह पकड़कर कहा, "मेरी कुटिया में चलो। मैं आज ही, इसी ब्रह्म मुहूर्त में तुम्हें दीक्षा दूंगा।"

कबीर गद्गद हो उठा। वह स्वामी रामानन्द के साथ उनकी कुटिया की ओर चल पड़ा।

६

साधो, एक रूप सब माहिं···

शाम होते होते काशी नगर में बन की आग की तरह यह खबर फैल गई कि स्वामी रामानन्द ने एक मुसलमान जुलाहे को [illegible] गुरुमन्त्र देकर अपना शिष्य बना लिया है।

काशी के इतिहास में यह घटना अनोखी बात थी। चारों ओर इसकी चर्चा होने लगी। पण्डितों में खलबली की लहर दौड़ गई। जिन स्वामीजी को पूरा भारत पूजता था और जिन्होंने अपने ज्ञान से काशी में ऊंचा स्थान बना लिया था, उन्होंने आज यह क्या अनर्थ कर डाला!

स्वामीजी का आश्रम गंगा-किनारे गऊघाट पर था। शाम को काशी के समस्त पण्डितगण वहां पहुंच गए। काशीनाथ पण्डा अत्यन्त उत्तेजित था। वह ढोंगी ब्राह्मण स्वामी रामानन्द को अपने रास्ते का कांटा समझता था। आज उसे स्वामीजी का अपमान करने का मौका मिल गया। वह जोर-जोर से अनर्थ की दुहाई देकर जनता को भड़का रहा था।

स्वामी रामानन्द अपनी कुटिया के आगे हमेशा की तरह शान्त खड़े थे। वे चाहते थे कि पण्डितगण चुप हो जाएं तो उन्हें समझाएं, लेकिन सभी बौखलाए हुए थे और आपस में ही जोर-जोर से बहस करते जा रहे थे।

तभी भीड़ के पीछे से किसी के गाने की आवाज सुनाई पड़ी। सबने मुड़कर देखा—कबीर था। एक अजीब-सा वातावरण बन गया। सब चुप हो गए। न कोई उसे रोक पा रहा था और न

स्वामीजी ही कुछ बोल पा रहे थे। कबीर गाता हुआ कुटिया की ओर बढ़ा।

साधो, एक रूप सब मांही।
अपने मनहिं विचारि के देखो, और दूसरो नाहीं,
एकै त्वचा, रुधिर पुनि एकै, विप्र शूद्र के मांहीं ॥…

कुटिया के निकट पहुंचकर कबीर ने स्वामीजी के पैर छुए।

काशीनाथ पण्डा जोर से बोला, "स्वामीजी! यह शूद्र है, विधर्मी है, आपका शिष्य बनने योग्य नहीं है।"

"शूद्र!" स्वामी रामानन्द ने कहा, "शूद्र की परिभाषा बता सकते हो, काशीनाथ?"

"शूद्र की कोई परिभाषा नहीं है, महाराज!" काशीनाथ ने उत्तर दिया, "भगवान मनु द्वारा स्थापित वर्ण-व्यवस्था सनातन काल से चली आ रही है।"

उपस्थित पण्डितगण चुप होकर दोनों के तर्क-वितर्क सुनने लगे। सभी आश्चर्यचकित थे, आखिर स्वामी रामानन्द जैसे परम भक्त और वेदों के ज्ञाता ने कबीर जैसे जुलाहे को क्यों अपना शिष्य बनाया? आखिर वह कौन-सा विधान है, जिसके अनुसार स्वामीजी ने यह किया?

"हां, मनु महाराज ने हम प्राणियों को अपनी क्षमता के अनुसार विभिन्न कार्य सौंपने के लिए वर्ण-व्यवस्था स्थापित की, लेकिन इसमें अपवाद भी हो सकते हैं।"

"अपवाद के आधिक्य से सारी वर्ण-व्यवस्था नष्ट हो सकती है, महाराज!" काशीनाथ ने उच्च स्वर में कहा, "जो जुलाहा है, वह ब्राह्मणों की पंक्ति में नहीं बैठ सकता।"

"हां, जो जुलाहा है, वह जुलाहा ही रहेगा।" रामानन्द ने उत्तर दिया, "लेकिन अपने कर्तव्य का पालन करते हुए यदि वह राम का नाम लेता है, तो कोई शक्ति उसे नहीं रोक सकती।"

"कबीर विधर्मी है !" काशीनाथ ने दूसरा तीर फेंका।

"कबीर जन्म से क्या है, यह किसी को ज्ञान नहीं। नीरु जुलाहे को वह रास्ते में मिला था। हो सकता है कि वह ब्राह्मण-पुत्र हो, क्षत्रिय हो या मुसलमान ही हो !" रामानन्द जी ने कहा, "लेकिन मैंने उसकी आत्मा में झांका है। वह हिन्दू हो या मुसलमान, ब्राह्मण हो या क्षत्रिय, लेकिन वह पुण्यात्मा है, यह मैं दृढ़तापूर्वक कह सकता हूं।"

"ऐसे तो हर शूद्र या मुसलमान पुण्यात्मा बन सकता है। क्या आप सबको अपना शिष्य बना लेंगे ?" काशीनाथ ने व्यंग्य से कहा।

"जो पुण्यात्मा है, उसके लिए मेरी कुटिया के द्वार सदैव खुले हैं।" स्वामी रामानन्द ने उसी तरह शान्त मुद्रा में उत्तर दिया, "और जो ब्राह्मण होकर भी अधम है, उसकी तो छाया तक छूना मैं पाप समझता हूं।"

"महाराज, यह हम ब्राह्मणों पर अन्याय है ! हम यह अन्याय नहीं सहेंगे !" काशीनाथ के साथ कई और ब्राह्मण चिल्लाए।

"ठीक है," स्वामी रामानन्द ने तत्काल कहा, "जो ब्राह्मण वास्तव में विद्वान और सच्चे मन से ब्राह्मण धर्म को निभाने वाला है, वह मेरा पूजनीय है। लेकिन जो ढोंगी है, ब्राह्मण-कुल में जन्म लेकर भी जो ज्ञान के दो शब्द नहीं जानता, उससे कहीं श्रेष्ठ यह मुसलमान जुलाहा कबीर है।"

"महाराज, आपको दो बातों में केवल एक ही बात स्वीकार करनी होगी !" काशीनाथ ने अन्तिम तीर छोड़ा, "या तो आप कबीर को ही स्वीकार करें या काशी के धर्म-समाज का प्रधानत्व !"

मैं कबीर को स्वीकार करता हूं।" स्वामी रामानन्द ने दृढ़ता से घोषणा की।

तब तो आपके प्रांगण में एक पल भी टिकना पाप है।" काशीनाथ ने वापस लौटते हुए कहा।

उसके साथ अन्य अनेक पण्डित 'हरे राम, हरे राम' कहते हुए लौट गए। कबीर अब तक चुप था; बोला, "गुरुदेव, मेरे कारण ही आज यह सब हुआ। मैं कितना अभागा हूं! आप मुझे त्याग दें। मेरे लिए इतना वैर मोल न लें।"

"वैर? कैसा वैर? किससे वैर?" स्वामी रामानन्द मुस्कराकर बोले, "इसमें वैर की क्या बात है? यह तो अपने मन की बात है। मेरा मन कहता है, तुम पुण्यात्मा हो। यह सारा संसार एक ही प्रभु का बनाया हुआ है और उसी का नाम है, राम। राम, जो आदमी नहीं था, राम जो दशरथ का बेटा नहीं था। मैं उस राम की बात करता हूँ कबीर, जिसे किसी ने नहीं देखा और जो सबको देखता है। यह पाप, झूठ, पक्षपात जिससे कुछ भी छुआ नहीं है, मैं उसी राम को मानता हूं। उसे खुदा कहें या कोई और नाम रख लें, मगर वह वही रहेगा।"

कबीर एकाग्रचित्त सुनता रहा। मगर उसका भारी मन हल्का न हुआ। रात का अंधियारा बढ़ता आ रहा था।

"रामानन्द स्वामी ने कहा, "कबीर! अब जाओ, रात हो गई। तुम्हारी मां राह देखती होगी।"

कबीर ने गुरु के चरण छुए और घर की ओर चल दिया। रास्ते में वह गुनगुना रहा था:

"कबिरा खड़ा बजार में, सब की मांगे खैर।
न काहू से दोस्ती, न काहू से बैर॥"

७

घूंघट के पट खोल री

नीमा उस दिन बहुत मगन थी। अभी दो
उसके घर आने वाली थी। कबीर के आते
गया, बेटे ? [illegible] देर कर दी ?"

"देर ?" कबीर ठिठककर बोला, "देर किस बात
नीमा ने कहा, "किसी बात का नहीं। रोटियां
जाती है, इसी पर कहती हूं जरा वक्त से आया कर
"हूं" कहकर कबीर ने लोटे से हाथ मुंह धोया
खाने बैठ गया।

नीमा उसके सामने थाली रखती हुई बोली, "आज
बात के ही कर ली है।"

"किस बात की ?"

"तू जैसे कुछ जानता ही नहीं ! सोलह साल का हो
विवाह नहीं होगा तेरा ?" नीमा ने झिड़ककर कहा।

"किससे होगा मेरा ब्याह ?" कबीर ने टुकड़ा मुंह में र
हुए पूछा, "मैं विवाह के चक्कर में नहीं पड़ूंगा, हां !"

नीमा ने झिड़कते हुए कहा, "अरे, तेरी मति मारी गई
क्या ? विवाह नहीं करेगा तो क्या यूं ही मारा-मारा फिरेगा
मेरे बाद तुझे टुकड़ा देने वाला भी तो कोई चाहिए !"

"मां, तुम अपने मरने की बात बार-बार मत किया करो !"

कबीर खाते-खाते रुककर बोला, "तुम्हारे बाद की मैं सोच भी नहीं सकता। मेरा मन कहता है, तुम्हारा साया हमेशा मेरे ऊपर इसी तरह रहेगा।"

"बस, तू अपने मन की रहने दे।" नीमा ने कहा, "तू तो बावला है। कोई हमेशा बैठा रहता है क्या? जो आता है, एक दिन उसे जाना ही पड़ता है।"

कबीर ने एक पल रुककर गम्भीरता से कहा, "मगर मां, विवाह करने में तो पैसे खर्च होते हैं। वे कहां से आएंगे?"

नीमा ने कहा, "मेरे जीते-जी तुझे उसकी फिक्र करने की जरूरत नहीं। काशीनाथ पण्डा के मैंने पिछले सब पैसे चुका दिए हैं। फिर कुछ उधार ले लूंगी।"

"मगर वह अब नहीं देगा, मां! यह सोच रखना!"

"क्यों?"

"क्योंकि उससे झगड़ा हो गया है।"

"झगड़ा?" नीमा ने चौंककर पूछा, "झगड़ा किस बात का? हम गरीबों से उसका क्या झगड़ा? कबीर, तू हर किसी से झगड़ता है। बता तो, क्या बात हुई?"

"बात कुछ नहीं, मां!" कबीर ने उत्तर दिया, "दरअसल मुझसे कुछ बात नहीं हुई। जो कुछ भी हुआ, स्वामी रामानन्द और उसके बीच हुआ। मैं तो सिर्फ बहाना था।"

"बहाना"'मैं समझी नहीं?" नीमा ने कहा।

"तुम इसे समझोगी भी कैसे?" कबीर थोड़ी उलझन महसूस करते हुए बोला, "मुझे स्वामीजी ने अपना चेला बना लिया है। बस, इसी बात पर काशीनाथ भड़क गया। शाम को तमाम पण्डितों को बटोरकर स्वामीजी की कुटिया पर जा पहुंचा और बकने लगा कि कबीर नीच है, जुलाहा है, मुसलमान है'''भला मां, तुम्हीं कहो, कबीर उसके बाप का क्या खाता है? और मां, मैं तुम्हारे पांव

'ऐसा ही होगा, लोई !" कबीर ने समझाया, "मैं तुम्हारे घर आऊंगा और तुम्हारे अब्बा से इजाजत मांगकर सबके सामने तुम्हें अपने घर ले आऊंगा।"

लोई चुप होकर सोचने लगी।

जब वह कुछ न बोली, तो कबीर ने फिर कहा, "लोई ! मैं जानता हूं, मेरा रास्ता कांटों से भरा है। आगे भी मैं शायद ही कभी तुम्हें सुख दे सकूं। इसीलिए मैं विवाह नहीं करना चाहता था। लेकिन अम्मा का जोर है। फिर तुमने भी हां भर दी। मुझ जैसे बावले से तुम विवाह करना चाहती हो तो तुम्हें भी बावली बनना पड़ेगा, लोई ! कबीर को पाने के लिए लोई को भी कबीर ही बनना पड़ेगा। बोलो, मंजूर है ?"

लोई एकटक उसकी ओर देखती रही. फिर सिर झुकाकर बोली, "जैसी तुम्हारी मरजी।"

"तो मैं कल सुबह आऊंगा, अच्छा ! तैयार रहना।" कबीर ने उसकी ओर मुड़कर कहा।

लोई भाग गई।

८

संतो ! देखउ जग बौराना

आश्रम से लौटते हुए काशीनाथ की हालत खिसियाए स
जैसी हो रही थी। कबीर पर उसे इतना क्रोध था कि
अगर बस चलता तो उसे वहीं मार डालता। घर जाने को
उसका मन न हुआ। उसके साथ अब भी अनेक पण्डे और तथा
कथित पण्डित थे। वे सब विश्वनाथ के मन्दिर के बाहर चबूतरे
पर इकट्ठे हो गए।

पण्डित काशीनाथ ने खड़े होकर कहना शुरू किया, "भाइयो!
आप सब लोगों ने अपनी आंखों से सब देखा और कानों से सु
है। स्पष्ट है कि स्वामी रामानन्द सठिया गए हैं। वरना
वैष्णव धर्म को इस प्रकार कलंकित करने की कोशिश न करते।
अब आप लोग ही कहें, इससे हिन्दू धर्म की क्या मर्यादा रह
जाएगी! हमारी संस्कृति का क्या होगा? विधर्मी शासक पहले
ही से हमारे धर्म को नष्ट करने की कसम खाए बैठे हैं। अगर
हमारे धार्मिक नेता भी बहकने लगे तो भगवान विश्वनाथ के इस
मन्दिर की जगह कल मस्जिद बन सकती है। क्या आप लोग
यह सब देखने के लिए तैयार हैं?"

"हर्गिज नहीं! कदापि नहीं!" यह पण्डित रुद्रनाथ की
आवाज थी, "बोलो, काशी विश्वनाथ की जय!"

जय-जयकार सुनकर आसपास के घरों के लोग भी निकल
आए। मन्दिर के पुजारी ने मशालों का प्रबन्ध कर दिया और
देखते ही देखते वह भीड़ सभा में बदल गई। लोग एकाग्र होकर
रहे थे और काशीनाथ उस घटना को अतिरंजित करके सुना

रहा था :

"भाइयो ! यह हम ब्राह्मणों के लिए डूब मरने की बात है कि एक मुसलमान जुलाहा हमारी बराबरी में बैठने की हिम्मत करे। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि बुढ़ापे में स्वामी रामानन्दजी की नीयत खराब हो गई है और वह किसी बड़े स्वार्थ में पड़कर इन विधर्मी शासकों के हाथ बिक गए हैं। अगर यह सच हुआ तो मालूम है, कल क्या होगा ? कल हमारा, तुम्हारा और सारे ब्राह्मण समाज का, सारी हिन्दू जाति का नेता कबीर होगा। और उसके बाद'''शिव ! शिव ! हे भोलेनाथ ! हे विश्वनाथ ! तुम्हारे होते हुए कलि का ऐसा प्रभाव !"

भीड़ की एकाग्रता और उत्तेजना को भांपकर वह आगे कहता गया, "तो भाइयो, हमें इसके लिए कुछ करना होगा। फन उठाने से पहले संपोले का नाश कर देना ही शास्त्रों में लिखा है। कहिए, आप लोग तैयार हैं ?"

शास्त्रों की आज्ञा का उल्लंघन करने की वहां किसमें हिम्मत थी ! फिर गगन-भेदी नारे गूंजने लगे, जिनका अर्थ था कि वे सब लोग पण्डित काशीनाथ के साथ हैं।

"तो आओ, मेरे साथ। हम अभी उससे निबट लेते हैं।" कहकर पण्डित काशीनाथ ने मशाल उठाई और नारे लगवाता हुआ कबीर के घर की ओर चल दिया। सैकड़ों आदमी भेड़ों की तरह उसके पीछे-पीछे चलने लगे।

कोलाहल सुनकर नीमा बाहर आ गई। पास-पड़ोस के जुलाहे भी इकट्ठे हो गए। सब हड़बड़ा उठे थे—अब क्या होगा ?

कबीर निश्चिन्त बैठा था।

नीमा ने घबराकर काशीनाथ से पूछा, "क्या हुआ, महाराज?"

"कबीर कहां है ?" काशीनाथ गरजा।

"मैं यहां हूं।" कबीर ने सामने आकर उत्तर दिया।

कर देने या किसी का घर जला देने में है ? क्या संसार का कोई भी धर्म इस प्रकार के बैर की सीख देता है ? अगर नहीं तो फिर यह बवंडर क्यों ?"

भीड़ में से कोई नहीं बोला। सब काशीनाथ की ओर प्रश्न-वाचक दृष्टि से देखने लगे।

"भाइयो ! स्वामीजी बोलते रहे, "मैं आप लोगों से विश्वास के साथ कहता हूं कि संसार जो इतने वर्गों में बट गया है, उसे भगवान ने नहीं बांटा है। उसे इन्सान के स्वार्थ ने बांट दिया है। ये राजा, ये महन्त, ये पण्डे और ये सेठ लोग ही हमें बांटने वाले हैं। वरना यह फर्क, जो वर्गों में बट जाने के बाद आ जाता है, पहले से क्यों नहीं होता ? जब हम पैदा होते हैं, तो हमारे शरीर की बनावट में फर्क क्यों नहीं होता ? हमें इन स्वार्थी लोगों से सावधान रहना है ! इनके बहकावे में आकर किसी का खून नहीं करना है, किसी का घर नहीं जलाना है।"

भीड़ जिस तरह एकत्र हुई थी, उसी तरह तितर-बितर हो गई। स्वामीजी भी अपने आश्रम की ओर चल दिए। काशीनाथ पण्डे का यह प्रयास भी व्यर्थ गया।

"बेटे कबीर !"

"हां मां !"

"ये लोग तुझे मारने आए थे ?"

"नहीं मां, यह उनकी भूल है। मैं उनके मारे नहीं मरूंगा।"

"लेकिन जल में रहकर मगर से बैर अच्छा नहीं होता, बेटे !"

"तुम कैसी बातें करती हो, मां !" कबीर ने मां को सान्त्वना दी, "डरकर रहना सबसे बड़ा पाप है। इससे आत्मा कमजोर होती है। आत्मा में ही राम होता है। राम कमजोर हो गया तो

आदमी कमजोर हो जाता है। मां, तुम डरो नहीं, ये लोग
कुछ नहीं बिगाड़ सकते। ये भी तो इनका कुछ नहीं बिगाड़
ये तो चाहता हूं, समाज में कोई दुखी न रहे। सब मानव-आ
काम करें और शान्ति से रहें।"

नीमा कुछ नहीं बोली।

कुछ देर रुककर कबीर ने कहा, "और मां, मैंने यह सोचा
है कि कल मैं लोई के घर जाकर उसे ले आऊंगा। हम किसी
काजी-वाजी के फेर में नहीं पड़ेंगे।"

"ऐं?" नीमा चौंक पड़ी, "तू यह क्या कह रहा है? ऐसे ही भेज
देगा उसका बाप? और बिरादरी के लोग क्या कहेंगे?"

"समाज-बिरादरी की बात छोड़ो, मां! देख तो लिया तुमने
कहां है हमारा समाज! गरीब समझकर झोपड़ी फूंकने आ
धमके। झोपड़ी बनाते समय किसी ने मदद भी दी थी? कि
हमारे ये भाई-बन्द? ये सिर्फ तमाशा देखना चाहते हैं। हुई
किसी की हिम्मत कि वह आगे बढ़कर काशीनाथ पण्डे को जवाब
देता? मां, ये सब लोग दूसरे का दुःख देखकर हंसने वाले हैं,
मदद देने वाले नहीं। फिर इन्हीं को खिलाने-पिलाने के लिए मैं
कर्ज में क्यों डूबूं?"

नीमा चुपचाप बेटे के तेजस्वी चेहरे की ओर ताकती रही।

९

काहें कूं माया दुख करि जोरो···

दूसरे दिन सुबह कबीर लोई के घर पहुंचा। घर के सामने ही पेड़ के नीचे लोई का बाप तकी सूत कात रहा था। कबीर ने उसे देखकर कहा, "चाचा, बन्दगी !"

"बन्दगी बेटे, आओ बैठो !" तकी ने मीठे स्वर में कबीर का स्वागत करते हुए कहा, "आओ बैठो !"

कबीर खटिया पर बैठ गया।

तकी ने पूछा, "क्यों, रात को क्या बात हुई थी ?"

"आपने नहीं सुना क्या ?"

"सुना तो था, पर क्या सच है क्या झूठ, इसका पता तो तुमसे ही चलेगा। लोग कहते है, कबीर हिन्दू हो गया। राम-नाम जपता है, कंठी पहनता है, तिलक लगाता है, रोज गंगा-स्नान को जाता है। क्या यह सच है ?" तकी ने पूछा।

कबीर ने कहा, "कबीर न हिन्दू है चाचा, न मुसलमान। और सचाई यह है कि कोई भी धर्म गरीब आदमी का नहीं हो सकता। गरीब आदमी का धर्म तो मेहनत और मजदूरी है। उसी में खुदा है और उसी मे राम। कंठी-तिलक तो ढोंग की बातें हैं। मैं न उनमें यकीन करता हूं, न मुल्ला की अजान में। अब तुम्हीं कहो चाचा, क्या खुदा बहरा है जो मौलवी इतने जोर से चीखता है ?"

कबीर की बातें सुनकर बूढ़े तकी को हंसी आ गई ; बोला,

"और ब्याह-व्याह के बारे में क्या इरादा है ?"

"ब्याह करने को तो आया हूं अब।" कबीर ने कहा, "क्यों, लोई ने कुछ बताया नहीं आपको ?"

अब की बार बूढ़ा चौंका। लोई ने तो उससे कुछ नहीं कहा था। बोला, "क्या मतलब ? मुझे किसी ने कुछ नहीं बताया।"

कबीर बोला, "शर्म के मारे नहीं बोली होगी, मैं बताता हूं। हम दोनों ने तय किया है कि हम आपकी दुआएं लेकर ही अपना विवाह हुआ मानेंगे और किसी काजी को अपना मुजाम नहीं बनाएंगे। आपको एतराज तो नहीं ?"

"मगर ऐसा किसलिए ?"

"इसलिए कि यह सीधा रास्ता है। इसमें कोई चख-चख नहीं होगी और काम भी हो जाएगा।"

"तुम्हारी बातें अजीब हैं, कबीर ! भला सोचो तो, लोग क्या कहेंगे ?"

"क्या कहेंगे ?" कबीर ने तर्क किया, "क्या हम कोई बुरा काम कर रहे हैं ? लोगों को खुश करने में हो सकता है, मेरा और आपका बाल-बाल कर्ज में बिक जाय। कल को जब महाजन डोंडी पिटवा-पिटवाकर हमें जलील करेगा, तब कोई आयेगा हमारी मदद को ? वे तो आज भी तमाशा देखेंगे और उस दिन भी।"

"बात तो तुम्हारी ठीक लगती है, कबीर, पर जरा जग-सुहाती नहीं है। दुनिया में रहकर दुनियादारी करनी ही पड़ती है।" बूढ़े तकी ने समझाने की कोशिश करते हुए कहा, "कल किसी बात पर पण्डित काशीनाथ बिगड़े थे, आज मौलवी शमी-मुद्दीन की खोपड़ी गर्म होगी। किस-किससे झगड़ा करेंगे ?"

कबीर ने कहा, "चाचा, मैं इन सबकी पोल जानता हूं। ये सब ढोंगी हैं। गरीबों को लूटते-खसोटते हैं।"

"मगर दुनिया में कुछ रिवाज तो है, बेटे ! उन्हें तो मानना ही होगा।" तकी ने चिन्तित होकर कहा।

"चाचा, जो रिवाज घर की एक-एक ईंट बिकवा दे, उसे दूर से ही सलाम करना ठीक होता है। मुसीबत में हमारा कोई साथ नहीं देता। घर में विवाह है तो सब खाने पर टूट पड़ना चाहते हैं। काजी रुपया ऐंठना चाहता है। नुकसान तो हमारा ही होता है न ? आप मुझसे लोई का विवाह करना चाहते है और अम्मा लोई को अपने बेटे की बहू बनाना चाहती है, हमारे लिए तो आप दोनों ही काजी हैं !"

"तेरी बात पते की है। मैं भी सैकड़ों घर इसी विवाह के खर्च में डूबते देख चुका हूं। मगर मन नहीं मानता है।" तकी ने चिन्तित होकर कहा, "फिर भी अगर तू नया रिवाज चलाना चाहता हैं तो मेरी दुआएं तेरे साथ है। लोई मेरी इकलौती बेटी है। तू आज से मेरा बेटा हुआ। तुझमें अगर इन बेकार के रिवाजों को खत्म करने की ताकत है, तो मैं तेरे रास्ते में नहीं आऊंगा।"

"चाचा," कबीर ने गद्गदहोकर कहा, "अगर आप जैसे बुजुर्गों की दुआएं मेरे साथ हों, तो जमाना ही बदला जा सकता है।"

"मुझे यकीन हो गया, बेटा, तू जरूर इन पण्डितों के और मौलवियों के मुंह फेरेगा। मेरी दुआएं तेरे साथ है।"

बूढे तकी के चेहरे पर खुशी की लहर दौड़ गई। उसने आवाज दी, "लोई !"

लोई नये कपड़े पहने तैयार थी। उसे मालूम था, क्या होगा। वह शर्माती हुई बाहर आ गई।

"बेटी, जा कबीर ही तेरा सब कुछ है आज से।" बूढ़े ने आंखों की कोर से पानी पोछकर उसके सिर पर हाथ फेरा।

लोई अब्बा से लिपटकर फ़फक उठी, "अब्बा !"

"जा बेटी, जा! तू तो पराया धन है। लड़की कब किसी की हुई है! आज से वही तेरा घर है।" तकी ने आंसू पोंछते हुए कहा।

रोती-बिलखती लोई कबीर के साथ नए घर की ओर चल पड़ी। तकी बहुत देर तक टकटकी लगाए उन्हें जाते देखता रहा।

१०

चलती चाकी देखि के—

स्वामी रामानन्द के आश्रम में रोज शाम को सत्संग होता। उसमें कबीर भजन गाता और स्वामीजी उपदेश देते। उपदेश में किसी दिन इतिहास होता, किसी दिन समाज की दशा पर बातें होतीं तो किसी दिन धार्मिक पाखण्डों की चर्चा होती। इस तरह का सत्संग काशी के किसी मठ या आश्रम में नहीं होता था। विशेष बात यह थी कि इसमें हर जाति और वर्ग के आदमी आते थे। किसी के भी आने पर रोक नहीं थी।

कबीर दिन-भर करघे पर बैठकर गुनगुनाता हुआ कड़ी मेहनत करता था। लोई और नीमा ताना-बाना डालती रहतीं। रोजाना एक थान तैयार हो जाता था और इसके साथ ही एक भजन भी।

शाम होते ही कबीर करघा छोड़कर आश्रम जाता। दिन में उसने जो भजन बनाया होता, उसे गाता। उसके भजनों में प्रायः वही भाव रहता जो स्वामी रामानन्द एक दिन पहले अपने उपदेश में बताते।

इसी आश्रम में कबीर को कुछ सच्चे मित्र भी मिले। इनमें माधवदास और बिजली खां प्रमुख थे। दोनों अपने-आपको कबीर का चेला कहते थे। कबीर को यह अच्छा नहीं लगता था। वह उन्हें दोस्त या छोटे भाई की नजर से देखता था।

कमाल की बात तो यह है कि लोग कथा सुनना छोड़कर उसकी सुनने लगते हैं।"

"यह सब कलि का प्रभाव है, पण्डितजी! उस पापी के मुंह न लगना ही ठीक है।" गुसाईं देवीचन्द जी बोले, "मैं उस दिन अपने महन्तजी के साथ जा रहा था। इतनी दूर से काशी-सेवन को आए थे। इतनी बड़ी गद्दी के मालिक हैं! यहां पर हजारों लोग उनके भक्त हैं। उनकी सवारी को देखकर कहने लगा: 'जाके संग दस-बीस हों, ताको नाम महन्त।' मानो महन्त न होकर कोई गिरोह-बन्द डाकू हों। मुझे तो कोई मौका नहीं मिलता वरना इसे ऐसा पांसूं कि छठी का दूध याद आ जाए बच्चू को।"

मिश्रजी बोले, "मारते के हाथ पकड़े जा सकते हैं, कहते की जबान नहीं पकड़ी जा सकती। उस दिन मैं मन्दिर में आरती करने लगा। वह बाहर खड़ा गा रहा था:

'दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाय।
घर की चाकी कोई न पूजे, जाको पीसो खाय।।'

यह कबीर-चर्चा न जाने कितनी देर चलती, लेकिन तभी एक लड़का दौड़ता हुआ आया और बोला, "स्वामी रामानन्द चल बसे।"

"कैसे? कब?" सब के सब एक-साथ बोल उठे।

"अभी-अभी कुछ देर हुई। सुना है कई दिनों से बीमार थे।" कहकर लड़का भाग गया। शायद उसे और कहीं जाना था।

"बीमार थे? हमने तो नहीं सुना।" काशीनाथ बोले, "भाइयो, हमें तो दाल में काला नजर आता है। स्वामी के पल्ले तो गहरा माल था। देखना, कबीर की झोपड़ी अब हवेली हो जाएगी!"

"अरे, इन नीच जाति के लोगों में कमाल भी नीच होता है। एक अक्षर तो जानता नहीं, कवि बना फिरता है! कविताई भी करता है और भलाई भी। देखो, इसने दिन-दिन दाम बढ़

ठेकेदारी करता है।" गुसाईंजी बोले।

रुद्रनाथ बोला, "मेरे विचार से इस घटना की खबर काशी-नरेश को भिजवा देनी चाहिए। वे भी तो स्वामीजी को मानते थे। उनसे कहा जाए कि उनके नाम पर एक मठ की स्थापना करवा दें और कोई ऊंचे कुल का आदमी उसका मठाधीश बनाया जाए।"

"हां, यह ठीक है।" काशीनाथ ने सहमति प्रकट की।

लोग उठ खड़े हुए और काशी-नरेश को समाचार देने च दिए। वहां मालूम हुआ कि स्वामीजी ने अपनी मृत्यु से पहले उन्हें बुलाया था और अपनी वसीयत कर दी थी।

काशी-नरेश ने कहा, "स्वामीजी का राजकीय सम्मान के साथ अन्तिम संस्कार किया जाएगा और उनके आश्रम की देख-भाल कबीर करेगा।"

सारे पण्डित अपना-सा मुंह लेकर लौट आए।

दिनरेगद्दू राजकीय सम्मान के साथ स्वामीजी के पवित्र शरीर का अन्तिम संस्कार करके गंगा में प्रवाहित कर दिया गया।

कबीर के मन पर इस घटना का बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ा। वह अपने-आपको अनाथ-सा अनुभव करने लगा। उसका वैरागी मन और भी वैरागी हो गया। अक्सर वह गाने लगता :

"चलती चाकी देखि के, दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में, साबत बचा न कोय॥"

खिलाफ कुछ बातें मेरे पास आ रही हैं।"

कबीर ने कहा, "मुझे मालूम है, महाराज ! आज्ञा दीजिए, मुझे क्या करना चाहिए ?"

"तुम वह आश्रम छोड़ दो !" काशी-नरेश ने कहा, "उससे तुम्हें लाभ ही क्या है ? जो सत्संग तुम वहां करते हो, उसे घर पर भी कर सकते हो।"

"मुझे कोई आपत्ति नहीं। मैं कल से ही आश्रम छोड़ दूंगा।" कहकर कबीर उठ खड़ा हुआ।

"कबीर !" काशी-नरेश ने कहा।

"जी !"

"तुम मुसलमान हो ?"

"नहीं।"

"तो क्या हिन्दू हो ?"

"नहीं।"

"तो फिर क्या हो ?"

"इन्सान।"

"इन्सान तो हो, पर तुम्हारी जाति क्या है, धर्म क्या है ?"

"इन्सान का धर्म इन्सानियत के सिवा कुछ नहीं होता, महाराज !" कबीर ने कहा, "मेरा धर्म है मेहनत करना, किसी को तकलीफ न पहुंचाना और लोगों को बुरी राह से हटाकर अच्छी राह पर लगाना।"

"लोग कहते हैं, तुम मुसलमान हो और उन्हीं की बातों का प्रचार करते हो !" काशी-नरेश ने शंका प्रकट की।

"मैं लोगों की परवाह नहीं करता, महाराज !" कबीर बोला।

"मगर मैं तो करता हूं।" काशी-नरेश बोले, "काशी का हिन्दू समाज मुझे हिन्दू धर्म का रक्षक मानता है।"

कबीर चुप रहा।

काशी-नरेश ने फिर कहा, "कबीर, तुम हिन्दू हो जाओ।"

"क्यों?" कबीर ने पूछा।

"इसलिए कि इससे बहुत-से झगड़े समाप्त हो जाएंगे।" काशी-नरेश ने समझाया, "स्वामीजी तुम्हारी रक्षा का भार मुझ पर डाल गए हैं। मैं अपने वचन का पालन करना चाहता हूं, इसीलिए कहता हूं, कबीर, तुम हिन्दू हो जाओ!"

"यह नामुमकिन है, महाराज!" कबीर ने उत्तर दिया।

"क्यों?"

"इसलिए कि मुझे उस धर्म में हजार खोट जुड़े दिखते हैं।"

"और इस्लाम में?"

"उसमें भी कम नहीं हैं। मैं तो दोनों ही से अलग हूं—राम और रहीम को बिल्कुल एक माननेवाला। यही मुझे बतला गए हैं स्वामीजी। उनकी इच्छा थी कि हिन्दू और मुसलमान एक हों। उनकी इच्छा का प्रचार ही मैं लोगों में करता हूं। यही बात दकियानूस हिन्दुओं और मुसलमानों को बुरी लगती है।"

"तो तुम दोनों धर्मों को बुरा मानते हो?"

"नहीं महाराज! दोनों धर्म उत्तम हैं, लेकिन पंडितों और मौलवियों ने अपने स्वार्थ के लिए इनमें जो बुराइयां जोड़ दी हैं, मैं उनका विरोध करता हूं।"

"तुम दोनों धर्मों को उत्तम मानते हो?" काशी-नरेश ने आश्चर्य से पूछा।

"हां, महाराज! मैं दोनों धर्मों का आदर करता हूं, केवल [illegible]"

"धन्य हैं! मैं समझ गया, कबीर!" काशी-नरेश ने कहा, "स्वामी रामानन्द जैसे महात्मा ने तुम्हारे गुण देखकर ही तुम्हें अपना शिष्य बनाया होगा। अब तुम जा सकते हो। मैं [illegible] है कोई भी तुम्हारा बाल बांका नहीं कर सकता।"

कबीर वापस चला आया।

लोई ताना डाल रही थी। नीमा खटिया पर लेटी थी। दो-तीन दिन से उसे बुखार था। कबीर मां के पास बैठ गया।

नीमा बोली, "आ गया, बेटे ?"

"हां, मां ! अब कैसा जी है ?"

"जी ?" नीमा फीकी हंसी हंसकर बोली, "बस, मेरे जाने का वक्त है, बेटा !"

"ऐसी बात न कर, मां !" कबीर ने कहा, "तू ठीक हो जाएगी।"

हसने की कोशिश में नीमा को खांसी उठ आई। कबीर ने पानी पिलाया तो खांसी रुकी। वह बोली, "तुझसे एक बात कहनी है, बेटे !"

"कहो न, मां !"

"तुझे अपने बाप की याद है न ?"

"हां, थोड़ी-थोड़ी। मैं सात-आठ साल का था तब।"

"हां, इतने ही का था। नीमा बोली, "एक दिन मैं तेरे बाप के साथ कहीं जा रही थी। यह लहरतारा तालाब है न ?"

"हां, मां !" कबीर ने उत्तर दिया।

"इस लहरतारा के किनारे एक शिशु पड़ा रो रहा था। हमने उसे उठा लिया।"

"फिर ?"

"फिर क्या, बेटे, मैं तेरे बाप के साथ अपने गांव के घर गई। वहां मैंने अपनी मां से कह दिया कि यह मेरा बच्चा है। तेरे बाप ने वहां जाकर लोगों से कह दिया कि गांव में लोगा बच्चा पैदा हुआ है। उस समय तक मेरे कोई औलाद नहीं थी। हम दोनों औलाद के लिए तरसते थे। तुझे पाकर हमने समझा कि खुदा ने ही हम पर यह मेहरबानी की है।"

"हूं !" कबीर ने हुंकार भरी।

"बेटे, मैंने तुझे हमेशा अपना बेटा समझा। कभी मन में नहीं आने दिया कि तू मुझे लहरतारा के किनारे मिला था।"

"मैं जानता हूं, मां!"

"क्या जानता है तू ?" नीमा ने चौंककर पूछा।

"यही कि मैं किसी विधवा ब्राह्मणी का बेटा था, जो मुझे तालाब के किनारे छोड़ गई थी। तुमने ही मुझे पाला-पोसा।" कबीर ने उसी तरह शान्त रहकर कहा।

"अरे, तू जानता था, तो फिर तूने पहले क्यों नहीं बताया ? मैं तो डर रही थी कि अब इतने दिनों बाद बताने पर कहीं तू यह न सोचने लगे कि मैंने अपने स्वार्थ के कारण तुझे कुछ नहीं बताया...लेकिन तुझे कहां से मालूम हुआ ?"

"इसे तो सभी जानते हैं, मां ! हमारा समाज ही ऐसा है कि हरेक आदमी दूसरे की निंदा करने के लिए उसकी बुराइयां ढूंढ़ता फिरता है, पर अपनी बुराइयां नहीं देखता। अपने जन्म की बात मैं बहुत पहले सुन चुका था।"

"मगर तूने मुझे कभी नहीं बताया ?"

"बताने की जरूरत ही क्या थी ! तुमने मुझे पाला-पोसा, बड़ा किया। मेरी असली मां तो तुम्हीं हो ! जिसने मुझे जन्म देते ही त्याग दिया, उसे मैं कैसे मां समझूं ?" कबीर ने उत्तर दिया।

"ऐसा न कह, बेटा !" नीमा ने [illegible] से कहा, "उस बेचारी ने लोकलाज के डर से ही तुझे छोड़ा होगा। वह कई बार इधर आती थी और दूर से ही तुझे देख जाती थी। मां की ममता बड़ी [illegible] होती है बेटे !"

नीमा की हिचकी [illegible] और गालों पर बहते आंसू देखकर कबीर की आंखें भी भर आईं।

नीमा ने फिर कहा, "बेटा, तू हिंदू [illegible] अब [illegible] नहीं, इसलिए [illegible]"

"नहीं मां, मैं न हिन्दू बनना चाहता हूं, न मुसलमान। मुझे जुलाहा ही रहने दो।" कबीर ने कहा, "मेरा धर्म सिर्फ इन्सानियत है। मैं हिन्दू और मुसलमान, दोनों को उनकी बुराइयां बताकर कहता हूं कि इन बुराइयों को छोड़ो। तभी तो दोनों ही मुझे अपना वैरी समझते हैं। मुसलमान कहते हैं कि मैं हिन्दू हूं, इसलिए इस्लाम की बुराई करता हूं, और हिन्दू कहते हैं कि मैं मुसलमान हूं, इसलिए हिन्दू धर्म की बुराई करता हूं। लेकिन मैं तो सिर्फ बुराइयां छोड़ने को कहता हूं, चाहे वे हिन्दू धर्म में हों या मुसलमान धर्म में।"

"बेटा, ये दकियानूस लोग इतनी जल्दी तेरी बात को नहीं समझेंगे। लेकिन मेरा दिल कहता है कि एक दिन आएगा जब हिन्दू और मुसलमान दोनों इस बात के लिए लड़ेंगे कि तू उनका है। हिन्दू कहेंगे तू हिन्दू है और मुसलमान कहेंगे तू मुसलमान है।"

कहते-कहते नीमा की सांस फूल गई, माथे पर पसीने की बूंदें झलक आईं। उसने आंखें बन्द कर लीं।

कबीर बैठा रहा। नीमा ने पानी मांगा। कबीर उठकर पानी लाया। एक घूंट पीकर नीमा बोली, "बेटा, अब मैं चली। जमाना बुरा है, सम्भलकर चलना…"

कहते-कहते उसकी गर्दन एक ओर को लटक गई।

१२

तनना-बुनना त्यजा कबीरा

मां की मृत्यु के बाद कबीर का मन काम में न लगा। उसका वैराग्य बढ़ता गया। स्वामी रामानन्द के आश्रम में जो सत्संग चलता आ रहा था, वह भी टूट गया था। माधवदास और बिजली खां रोजाना आते। उन्हीं के साथ कबीर निकल पड़ता। कभी वे कब्रिस्तान में जाकर नीमा की कब्र पर बैठते, कभी श्मशान-घाट में—जहां रामानन्द जी का शरीर राख बन गया था। वे जलती हुई चिताओं को देखते रहते। कभी-कभी तो पूरा दिन और पूरी रात यों ही बीत जाती। कबीर बौराया-सा असार संसार की नीरसता को देख कुछ गा उठता।

लोई जल्दी ही मां बनने वाली थी। ऐसी हालत में वह काम अधिक न कर पाती। घर की हालत गिरती गई। लेकिन कबीर के मन में वैराग्य बराबर बढ़ता चला गया। वह या तो नदियों में जाकर पीरों से बातें करता रहता या मरघटों में कनफटे जोगियों से। कभी दिन-भर गायब रहता, कभी रात-भर।

अचानक कुछ दिन तक कबीर घर लौटा ही नहीं। लोई को चिन्ता बढ़ी। उसने माधवदास के घर जाकर पूछा। माधवदास भी घर पर नहीं था। बिजली खां के घर गई, वह भी नहीं था। किससे पूछे? कहां खोजे? लोई परेशान हो उठी।

लौटकर घर पहुंची तो बिजली खां बैठा मिला। लोई ने

पूछा, "वे कहां रह गए ?"

बिजली खां बोला, "गुरु जोगी हो गए !"

"नहीं-नहीं।" लोई बोली, "मैं नहीं मान सकती। ऐसा कभी नहीं हो सकता।"

"मगर ऐसा हो गया है," बिजली खां ने कहा, "मैंने अपनी आंखों से उन्हें गेरुए कपड़ों में देखा है। उनके साथ माधवदास भी जोगी हो गया है। मुझसे भी पूछा था। मैंने मना कर दिया। गुरु ने जाते-जाते कहा :

'तनना बुनना त्यजा कबीरा।
राम नाम लिख लिया सरीरा॥'

"अब क्या होगा, बिजली खां ?" लोई ने पूछा।

"मेरा मन कहता है," बिजली खां बोला, "गुरु का मन वहां नहीं रमेगा। उन जोगियों के पाखण्ड देख वे जल्दी ही वहां से भाग खड़े होंगे। हां, तुम्हें तब तक कोई कष्ट न हो, इसके लिए मैं अपनी बहन को भेज देता हूं। किसी भी तरह की तकलीफ हो तो मुझसे कहना। मैं तुम्हारे छोटे भाई के समान हूं।"

लोई को उसकी बातों से कुछ दिलासा मिला।

अपनी बहन को भेजने का आश्वासन देकर बिजली खां जाने लगा, तो लोई ने कहा, "और हां, बिजली खां, यह बात किसी और से न कहना !"

मगर जाने कैसे यह खबर लोई के बाप को लग ही गई। वह यह सदमा बर्दाश्त न कर सका। बेटी के गम में बूढ़े ने प्राण त्याग दिए। लोई के लिए यह एक और मुसीबत हो गई।

इस घटना के एक माह बाद, लोई के पुत्र हुआ। लेकिन उसे पुत्र होने की बहुत खुशी न हुई। उसका मन कबीर पर ही लगा रहा। जाने कहां होंगे वे !

उधर कबीर गोरखपन्थी जोगियों के साथ दर-दर भटकता

रहा। कभी एक मण्डली में शामिल होता, कभी दूसरी में। वह अन्य जोगियों के साथ घर-घर जाकर अलख जगाता। इन्हीं मण्डलियों में उसे कुछ पहुंचे हुए योगी भी मिले, जिनसे उसने हठयोग की साधना सीखी। ओंकार के भेद समझे। ब्रह्म, निरंजन और माया का ज्ञान प्राप्त किया।

परन्तु यहीं उसे कुछ कटु अनुभव भी हुए। जोगी गांव-गांव में अलमस्त घूमते; भीख मांगकर रोटी खाते; गांजा, भांग और सुलफा पीते; दुराचार करते। अधिकांश जोगियों में ज्ञान कम था, आडम्बर अधिक।

कोई पांच वर्ष तक इसी तरह भटक-भटकाकर कबीर एक दिन घर लौट आया।

"मैं आ गया हूं, लोई!" कबीर ने आगन में पैर रखते ही कहा।

लोई करघे पर बैठी थी। कबीर की आवाज सुनते ही वह माथे पर पल्ला खींचकर खड़ी हो गई। कबीर उसके सामने आया। वह चुप खड़ी रही। तभी पाच वर्ष का बालक अन्दर से आया और लोई से सटकर खड़ा हो गया। वह कौतूहल से कबीर की ओर देखने लगा।

"कमाल है!" कबीर ने आश्चर्य से उस बच्चे की ओर देखा और फिर लोई से कहा, "यह बच्चा तुमसे इस तरह चिपका हुआ है, मानो तुम्हारा ही हो।"

लोई ने शरमाकर आंखें नीची कर लीं। फिर एकाएक कबीर को याद आ गया कि जब उसने घर छोड़ा था, तब लोई के बच्चा होने वाला था। यह सोचते ही उसे अपने अज्ञान पर अचानक जोर की हंसी आ गई।

उसे इस प्रकार बिना कारण हंसते देख लोई [illegible] लड़का आश्चर्य से उसे देखने लगा

"कमाल है ! मैं सब-कुछ भूल गया था," कबीर ने मुस्करा-कर अपनी झेंप मिटाते हुए कहा, "क्या नाम रखा है इसका ?"

लोई ने एक बार बच्चे की ओर देखा, फिर उसके सिर पर हाथ रखकर बोली, "अभी तक तो कुछ भी नहीं रखा था, मगर अब तुमने बता दिया।"

"क्या बता दिया ?"

"इसका नाम।"

"क्या नाम बताया ?"

"कमाल।"

"कमाल है ! " कबीर ज़ोर से हंस पड़ा

लोई भी हंस दी और लड़का भी।

पांच वर्षों से जो बेचारी रोज कबीर के लौटने के लिए दुआए मांगती, गरीबी और दुःख में दिन काट रही थी, आज क्षणभर में ही उसका सारा दुःख गायब हो गया।

लेकिन इधर घर का खर्च चलाने के लिए लोई जो उधार लेती रहती थी, उसे महाजन ने ब्याज जोड़-जोड़कर काफी बढ़ा दिया था। अब दोनों को चिन्ता होने लगी कि यह उधार किस तरह चुकाया जाए ?

१३

साधो, देखो जग बौराना

कबीर ने सोचा था जो कर्ज हो गया है वह दिन-रात काम करके उतार देगा, मगर हुआ इसका कुछ उल्टा ही। जब से कबीर लौटकर आया तब से साधुओं का आवागमन भी बढ़ गया। दोनों जितना कमाते, उसे ये साधु लोग खा जाते। कभी-कभी तो उन्हें खुद भूखों ही रहना पड़ता।

परिणाम वही हुआ, जिसका डर था। महाजन दमड़ीमल ने कबीर के खिलाफ नालिश कर दी। कबीर को फिर काशी-नरेश के सामने पेश होना पड़ा।

काशी-नरेश ने कबीर से कहा, "तुम्हारे खिलाफ सेठ दमड़ीमल ने आरोप लगाया है कि तुमने उससे कई वर्ष हुए कर्ज लिया था। उसका सूद तक तुमने अदा नहीं किया। क्या यह सच है?"

"सच है," कबीर ने कहा, "मगर मैं कर्ज चुकाना चाहता हूं।"

"कब?" काशी-नरेश ने पूछा।

"मुझे कुछ मुहलत और मिल जाए।" कबीर ने कहा।

काशी-नरेश ने दमड़ीमल से पूछा, "कबीर तुम्हारा कर्ज चुकाने के लिए कुछ समय मांगता है, तुम्हें कुछ एतराज है?"

दमड़ीमल ने अपनी रजामन्दी दे दी और कबीर को छह माह का समय मिल गया।

बरसों का कर्ज महीनों में कहां उतरने वाला था! वह दिन

करीब आता जा रहा था। इस बीच न तो मेहमानों का आना कम हुआ और न आमदनी ही बढ़ी।

कर्ज चुकाने की चिन्ता अकेले कबीर को ही नहीं थी, उसके दोस्त और अनुयायी भी इस चिन्ता में थे कि किसी तरह कबीर का कर्ज उतर जाय मगर इस सम्बन्ध में कौन क्या कर रहा था, इसकी खबर कबीर को न थी!

जिस दिन कबीर का काशी-नरेश की अदालत में पेश होना था, उसी रात बिजली खां आया। रुपयों से भरी थैली कबीर को थमाते हुए वह बोला, "लो, मेरे मामू ने दी है।"

कबीर को मालूम था कि बिजली खां का मामा अमीर आदमी है। उसने थैली संभालकर रख ली। दूसरे दिन काशी-नरेश के सामने कबीर ने दमड़ीमल का कर्ज चुका दिया।

मगर तभी कुछ सिपाहियों के साथ काशीनाथ दरबार में आ धमका, बोला, "ठहरो महाराज! यह रुपया चोरी का है। कबीर ने कल रात मेरे घर में सेंध लगाकर यह रुपया चुराया है।"

"यह झूठ है!" कबीर चिल्ला उठा, "यह झूठ है!"

'तो महाराज कबीर से पूछा जाय कि यह रुपया उसके पास कहां से आया है?" काशीनाथ ने कहा।

कबीर कुछ देर चुप रहकर बोला, "यह रुपया मुझे एक दोस्त से मिला है और उसे यह रकम उसके मामा ने दी है। उसका मामा एक रईस आदमी है।"

"उस आदमी का नाम?" काशी-नरेश ने पूछा।

"उस आदमी का नाम बिजली खां है।" कबीर ने बता दिया।

"बिजली खां को हाजिर किया जाय!" काशी-नरेश ने आज्ञा दी, "और कबीर को निर्णय होने तक हिरासत में रखा जाय।"

कबीर को हवालात में बन्द कर दिया गया। चार सिपाही

बिजली खां को तलाश में दौड़े। थोड़ी देर बाद आकर उन्होंने कहा, "बिजली खां का कहीं पता नहीं चला।"

बिजली खां के मामा बदरद्दीन को बुलाया गया। उसने आकर कह दिया, "न तो मैंने कोई कौड़ी बिजली खां को दी है, न मैं उसे देने वाला हूं। मुझे मालूम है कि उसकी सोहबत कबीर जैसे लफंगे आदमियों की है, जिनका न कोई धर्म है न ईमान।"

काशी-नरेश ने इस बयान के आधार पर निर्णय लिया। उन्होंने आज्ञा दी, "कबीर को दो सौ कोड़े लगाए जायं।"

काशीनाथ की बाछें खिल गईं।

कबीर को कोड़ों की मार की उतनी चिन्ता नहीं थी, जितनी वेदना इस बात की थी कि उसे बिजली खां जैसे दोस्त ने चोर साबित करा दिया है। कर्जा न चुकाने पर शायद इतना जलील न होना पड़ता, जितना अब होना पड़ा।

सिपाही कबीर को बाहर निकाल रहे थे, जिससे उसे कोड़े लगाने की आज्ञा का पालन किया जा सके। तभी बाहर से भारी भीड़ का कोलाहल सुनाई पड़ा। शोर काफी नजदीक आ चुका था। काशी-नरेश और उसके दरबार में उपस्थित सभी लोग चौकन्ने हो गए।

"क्या है?" काशी-नरेश ने गरजकर पूछा।

"हुजूर शहर की जितनी भी नीच कौमें हैं, सभी उमड़ी चली आ रही हैं। सैकड़ों लोगों का जलूस है। उनका नारा है, कबीर निर्दोष है।" हांफते हुए एक सिपाही ने बताया।

काशी-नरेश के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं फिर भी उन्होंने पूछा, "उनका नेता कौन है?"

"बिजली खां और माधवदास के दो नौजवान हैं हुजूर।" सिपाही ने बतलाया।

"अच्छी बात है, आने दो।" काशी-नरेश ने कहा। फिर

बोला, "उनसे कहो, बिजली खां भोतर आ जाए और बाकी लोग बाहर रुके रहें, उनसे हम वहीं मुलाकात करेंगे। पहले इन दोनों चोरों से निबट लें।"

बिजली खां निडर शेर की तरह दरबार में आया। उससे पूछा गया, "कबीर कहता है, यह रकम तुमने उसे दी थी?"

"जी हां, मैंने ही यह रकम अपने गुरु कबीर को दी!" बिजली खां बोला।

"बतला सकते हो, यह रकम तुम्हारे पास कहां से आई?" बिजली खां ने घूरकर काशीनाथ की ओर देखा और कहा, "इस पण्डित ने यह थैली कल मुझे कबीर पर तरस खाते हुए दी थी।"

"यह झूठ है!" काशीनाथ चिल्लाया, "यह झूठ है!"

"क्या झूठ है, क्या सच है? इसका फैसला तो आप ही करेंगे।" बिजली खां ने काशी-नरेश से उसी स्वर में कहा, "मगर यह मैं ईमान से कहता हूं कि यह रकम काशीनाथ ने मुझे दी थी और मैं गुरु से इसलिए झूठ बोला था कि वे इस आदमी का धन कभी स्वीकार न करते।"

बीच में ही टोककर काशीनाथ फिर बोल पड़ा, "महाराज! इससे पूछा जाय कि मैं ही उस पर क्यों तरस खाता। मेरी तो उससे बरसों से दुश्मनी है। कोई आदमी दुश्मन की सहायता की बात सोच भी नहीं सकता। यह झूठ है! सरासर झूठ है! मेरे घर में सेंध लगाकर यह रुपया चुराया गया है!"

काशी-नरेश एकाएक किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सके। दोनों ही बातें ऐसी थीं जिन पर सहज विश्वास होता था। यह साबित हो चुका था कि रकम काशीनाथ की ही थी। काशीनाथ की कबीर के साथ दुश्मनी का ज्ञान भी काशी-नरेश को था। सम्भव है कि दुश्मनी का बदला चुकाने के लिए काशीनाथ ने बिजली खां को रकम दे दी हो ताकि बाद में कबीर पर चोरी

का जुर्म लगाया जा सके···और कबीर को कर्ज के बोझ से मुक्त करने के लिए बिजली खां ने सेंध लगाई हो, यह भी नामुमकिन नहीं लगता था।

काशी-नरेश ने कड़ककर बिजली खां से पूछा, "अ कबीर चोर नहीं तो यह भीड़ किस लिए? क्या बगावत कर का इरादा है?"

"नहीं महाराज! बगावत करने का जरा इरादा नहीं है।" बिजली खां ने उत्तर दिया, "ये सब आप जैसे नेक दिल राजा के पास फरियाद लेकर आए हैं। अगर कबीर जैसे निर्दोष और महातमा आदमी पर भी अत्याचार होगा तो फिर जन साधारण की क्या दशा होगी? हम लोग बागी नहीं हैं। हम सब गवाह हैं कि कबीर नेक और धर्मात्मा हैं।"

काशी-नरेश ने घूरकर काशीनाथ की ओर देखा। काशीनाथ की कंपकंपी छूट गई। उसने क्या सोचा था और क्या हो गया।

काशी-नरेश ने उसकी हालत देखकर भांप लिया कि हो न हो, यह काशीनाथ की चालबाजी है। उन्होंने कड़ककर कहा, "काशीनाथ! क्या तुम सच कहते हो कि कबीर ने तुम्हारे घर में सेंध लगाई है?"

काशीनाथ रोता हुआ आगे बढ़कर काशी-नरेश के पैरों पर [illegible]र पड़ा, "महाराज मुझे क्षमा करें! मुझ पर दया करें! कबीर [illegible] सेंध नहीं लगाई; मैं अपना मुकदमा वापस लेता हूं।"

"मुकदमा वापस लेने का सवाल नहीं है, काशीनाथ!" काशी-[illegible] ने क्रुद्ध होकर कहा, "तुमने एक ईमानदार और नेक [illegible]ी पर चोरी का झूठा दोष मढ़ा है। तुम्हें इसकी सजा [illegible]नी पड़ेगी।"

[illegible]हर से भीड़ नारा लगाती रही, "काशी-नरेश की जय हो [illegible] निर्दोष है। न्याय किया जाए।"

काशी-नरेश ने फैसला सुनाया, "कबीर को छोड़ दिया जाए और काशीनाथ को दो सौ कोड़े लगाए जाएं !"

चारों ओर से काशी-नरेश की जय-जयकार होने लगी। भीड़ ने कबीर को कन्धों पर उठा लिया। उस दिन काशी की गली-गली में कबीर का जलूस निकाला गया। कबीर की जय-जयकार से सारा आकाश गूंज उठा।

उसी दिन से काशी में नया धर्म-आन्दोलन शुरू हुआ, जिसे 'कबीर-पंथ' कहा गया। कबीर स्वयं कोई भी धर्म नहीं चलाना चाहता था, लेकिन उसके शिष्यों ने 'कबीर-पंथ' चला ही दिया। इसे चलाने वाले थे—नवाब बिजली खां, राजा वीरसिंह बघेला, सुरत गोपाल, तत्वा जीवा, जागूदास और भागूदास। यह ऐसा धर्म था, जिसमें सभी धर्म, जाति और वर्ण के लोग शामिल हो सकते थे। इस धर्म के द्वार सब के लिए खुले थे।

१४
तेरा साईं तुज्झ में

'कबीर-पंथ' के कारण काशी ही नहीं, बल्कि पूरे देश में खलबली मच गई। हिन्दू नाराज हुए, मुसलमान नाराज हुए नाथपंथी साधु क्रुद्ध हो उठे। लेकिन देश की जितनी पददलित जातियां थीं, उनकी बाछें खिल गईं। वे सब कबीर-पंथ अपनाने लगीं।

कबीर पर मुसलमान तो पहले से ही नाराज थे, क्योंकि कबीर न तो नमाज पढ़ता था, न रोजे ही रखता था। वह न कभी मस्जिद गया था, न काजी के घर।

उन दिनों भारत की बागडोर बादशाह सिकन्दर लोदी के हाथ में थी। चारों तरफ मुसलमानों का बोलबाला था। काशी में जो काजी था, वह इस्लाम का दीवाना था। सीधे सिकन्दर लोदी तक उसकी पहुंच थी। कबीर-पन्थ और कबीर की इस्लाम-विरोधी बातें सुनकर एक दिन उसने कबीर को बुलवा भेजा। शाम को कबीर उसके घर पहुंचा।

काजी ने पूछा, "सुना है, कबीर, तू काफिर (हिन्दू) हो गया?"

"जी नहीं!" कबीर ने उत्तर दिया।

"तो नमाज क्यों नहीं पढ़ता? मस्जिद क्यों नहीं जाता?" काजी ने डांटकर पूछा।

कबीर ने कहा :

"कंकर पत्थर जोरि के, मस्जिद लई बनाय।
ता पर मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय॥"

"कबीर !" काजी ने कड़क कर कहा, "यह इस्लाम के खिलाफ बगावत है, जो कभी बर्दाश्त नहीं की जायगी ! तुझे कुचल दिया जायगा । तू जानता नहीं क्या ?"

"जानता हूं ।" कबीर ने कहा, "अच्छी तरह जानता हूं कि इसी इस्लाम के नाम पर हजारों हिन्दुओं को रोजाना मौत के घाट उतारा जा रहा है और आप इसे बड़ा अच्छा काम समझ रहे हैं । मगर मैं पूछता हूं कि हिन्दू और मुसलमान में क्या फर्क है ?"

"फर्क···फर्क मैं क्या बताऊं ! क्या तू नहीं जानता कि दोनों के रास्ते अलग-अलग हैं ?" काजी ने कहा ।

"कोई अलग रास्ता नहीं है ।" कबीर ने निडर होकर कहा, "दोनों एक ही माटी से बनते हैं और उसी में जा मिलते हैं ।"

"तू काफिर है ! और तेरी सजा मौत है !" काजी बिफ़र कर बोला, "मैं जहांपनाह से तेरी शिकायत करूंगा और तुझे सजा दिलाऊंगा ।"

"मैं फिर कहता हू, काजी साहब" कबीर बोला, "काफिर मैं नहीं काफिर वे हैं, जो अपनी ताकत के जोश में लोगों का गला काटते हैं ! बेसहारा औरतों की इज्जत लूटते हैं । मैं किसी बादशाह से नहीं डरता । मेरा साहब मेरी हिफ़ाजत करेगा ! मैं उसी पर भरोसा करता हूं ।"

कबीर वहां से अपने घर की ओर चल दिया । काजी क्रोध में भरकर बड़बड़ाता रह गया ।

लोई कमाल को रोटी खिला रही थी । कबीर को आया देखकर बोली, "आगए ! काजी ने क्या कहा ? मेरी तो डर के मारे जान निकली जा रही थी ।"

"अरे, कोई खास बात नहीं हुई," कबीर ने टाला "कहता था तू काफिर है । मैं चला आया ।"

"अच्छा । हाथ-मुंह धो लो, मैं रोटी लाती हूं ।"

"ले आओ।" कबीर को भूख लगी हुई थी।

कबीर ने खाना शुरू किया। लोई भी कमाल को सुलाकर पास आ बैठी। बोली, "क्यों जी, तुम्हें साधु बनते वक्त कमाल का खयाल भी नहीं आया?"

"अब उसकी बात न करो, लोई! जो हुआ, सो हुआ।"

मगर लोई आज जमकर बैठी थी। बोली, "जब से आए हो, तुमसे बातें ही नहीं हुई। कैसा लगा साधुओं का संग?"

"साधुओं का संग तो कबीर को हमेशा अच्छा लगता है। पर साधु हैं कहां? ये जो भीख मांगते रगे साड मुह-छूट चरते-फिरते हैं, ये साधु तो नहीं हैं।

तेरा साईं तुज्झ मे, ज्यों फूलन में बास।
कस्तूरी का मिरग ज्यो, फिर-फिर ढूढे घास।।"

लोई गद्‌गद हो उठी; उसने कहा, "मेरे मन में तो पूरा विश्वास था कि तुम जरूर लौटोगे।"

कबीर बोला, "मुझे तो ऐसा लगता है लोई, जैसे मैं कहीं गया ही नहीं था। हमेशा यहीं रहा।"

"खैर, छोड़ो!" लोई बोली, "परदेश की कुछ बातें तो बताओ। कहां तक गए थे? कैसा लगा?"

"बहुत दूर-दूर तक गया, लोई! सभी जगह एक-सरीखी हैं।" कबीर बोला, "कहीं कोई फरक नहीं दिखाई दिया।"

"बाहर घूमकर सुख तो मिला होगा?" लोई ने पूछा।

"सुख अगर है तो घर में ही है।" कबीर ने कहा।

"तो फिर लौट नहीं आए तभी!"

"कुछ मैं ही भरम गया था, कुछ साधुओं ने भरमा दिया।" कबीर ने उत्तर दिया, "उनका कहना था कि नारी माया है, जो आदमी को अपने में समेटे रखती है। वह मोक्ष प्राप्त करने में बाधक है।"

"कबीर!" काजी ने कड़ककर कहा, "यह इस्लाम के खिलाफ बगावत है, जो कभी बर्दाश्त नहीं की जायगी! तुझे कुचल दिया जायगा। तू जानता नहीं क्या ?"

"जानता हूं।" कबीर ने कहा, "अच्छी तरह जानता हूं कि इसी इस्लाम के नाम पर हजारों हिन्दुओं को रोजाना मौत के घाट उतारा जा रहा है और आप इसे बड़ा अच्छा काम समझ रहे हैं। मगर मैं पूछता हूं कि हिन्दू और मुसलमान में क्या फर्क है?"

"फर्क···फर्क मैं क्या बताऊं! क्या तू नहीं जानता कि दोनों के रास्ते अलग-अलग हैं ?" काजी ने कहा।

"कोई अलग रास्ता नहीं है।" कबीर ने निडर होकर कहा, "दोनों एक ही माटी से बनते हैं और उसी में जा मिलते हैं।"

"तू काफिर है! और तेरी सजा मौत है!" काजी बिगड़कर बोला, "मैं जहांपनाह से तेरी शिकायत करूंगा और तुझे सजा दिलाऊंगा।"

"मैं फिर कहता हूं, काजी साहब" कबीर बोला, "काफिर मैं नहीं काफिर वे हैं, जो अपनी ताकत के जोश में लोगों का गला काटते हैं! बेसहारा औरतों की इज्जत लूटते हैं। मैं किसी बादशाह से नहीं डरता। मेरा साहब मेरी हिफाजत करेगा! मैं उसी पर भरोसा करता हूं।"

कबीर वहां से अपने घर की ओर चल दिया। काजी क्रोध में भरकर बड़बड़ाता रह गया।

लोई कमाल को रोटी खिला रही थी। कबीर को आया देखकर बोली, "आगए! काजी ने क्या कहा? मेरी तो डर के मारे जान निकली जा रही थी।"

"अरे, कोई खास बात नहीं हुई," कबीर ने टाला "कह रहा था तू काफिर है। मैं चला आया।"

"अच्छा। हाथ-मुंह धो लो, मैं रोटी लाती हूं।"

तनी थीं, मानो साधु सारी दुनिया को निगल जाएंगे ।

कबीर ने कहा, "प्रणाम साधुओ, प्रणाम !"

कबीर प्रणाम कर रहा था और साधु कबीर को ऐसे देख रहे थे, मानो उनके सामने कोई घृणित और पापी आदमी खड़ा हो। उनकी आंखों में नफरत थी।

एक जोगी, जो सबसे आगे था, बोला, "हम तुझे ले जाने के लिए आए हैं, कबीर !"

"मुझे ?" कबीर ने आश्चर्य से पूछा।

"हां !" उसने कहा, "तुमने हमारे पंथ को बदनाम किया है। हम तुम्हारी नगरी को भस्म कर देंगे। तुम्हें मार डालेंगे।"

कबीर को हंसी आ गई।

"तू हंसता है ?" एक जोगी चिल्लाया।

कबीर ने व्यंग्य से अपना पद सुनाया .

"मन ना रंगाए, रंगाए जोगी कपड़ा।
आसन मारि मन्दिर में बैठे,
ब्रह्म छांड़ि पूजन लगे पथरा।
कनवा फड़ाय, जटवा बढ़ौले,
दाढ़ी बढ़ाय जोगी होइ गैले बकरा ॥"

"बकवास बन्द करो !" जोगियों के अगुवा ने कड़क कर कहा, "तुम हमारे साथ चलो वरना···"

"वरना क्या ?" लोई अब तक कबीर के पीछे सहमी खड़ी थी, वह आगे आकर कड़क उठी, "जिस मां ने तुम्हें जन्म दिया, उसी को छोड़कर चले आए हो और अब दूसरों को भी यही नसीहत देते हो ? अपने कर्तव्य से भागना कायरता है। तुम कायर हो। तुम्हें कभी भी मुक्ति नहीं मिलेगी।"

"ओ माया, चुप रह !" जोगी ने अपनी लाठी तानते हुए कहा, "देखो, यह माया है ! इसी ने भरमा रखा है संसार को।"

"फिर तुमने क्या कहा ?" लोई ने पूछा ।

"उस वक्त तो मैं मान गया था, मैंने उनसे बहुत-कुछ सीखा भी, मगर बाद में सोचा तो उनकी बात ठीक नहीं जंची। इन्सान को अपना घर भी देखना चाहिए। जब उसने गृहस्थ का भार उठाया है तो अवश्य निभाना चाहिए।"

लोई ने पूछा, "वे साधु आपको फिर न घेरेंगे क्या ? आपने तो एक तरह से उनकी नाक काट ली।"

"आएंगे तो एक बार झगड़ा भी होगा, मगर अब वे मुझे ले नहीं जा सकेंगे।"

"क्यों ?" लोई ने पूछा, "वे तुम पर हंसेंगे और कहेंगे कि कबीर माया के फन्दे में फंस गया है।"

"मुझे इसकी परवाह नहीं," कबीर ने निश्चिन्त होकर कहा, "अच्छा, अब सो जाओ ! बहुत रात हो गई है।"

दूसरे दिन सुबह लोई ताना डालने लगी। कबीर करघे पर जाकर बैठा ही था कि कोलाहल सुनाई दिया। कबीर उठकर बाहर आया ; लोई भी उसके साथ थी। देखा, बाहर नाथपंथी जोगियों का जलूस था। उनके साथ भारी भीड़ थी। लोग साधुओं को देखकर बिछे जा रहे थे, मानो साधु नहीं साक्षात् परमेश्वर ही दल-बल सहित काशी में पधारे हों।

कबीर ने दूर से देखा और देखता ही रह गया। लोई क डर हुआ, कहीं ये कबीर को फिर न ले जाएं। बोली, "सुनो,तु झोंपड़े में छिप जाओ।"

"तुम डरो नहीं, लोई !" कबीर ने कहा, "आने दो। दे तो क्या कहते हैं !"

जोगी चिल्लाते, "अलख निरंजन !"

भीड़ कहती, "आदेश ! आदेश !"

सभी साधुओं के सिर पर घनी जटाएं थीं। सबै इन

तनी थीं, मानो साधु सारी दुनिया को निगल जाएंगे।

कबीर ने कहा, "प्रणाम साधुओ, प्रणाम !"

कबीर प्रणाम कर रहा था और साधु कबीर को ऐसे देख रहे थे, मानो उनके सामने कोई घृणित और पापी आदमी खड़ा हो। उनकी आंखों में नफरत थी।

एक जोगी, जो सबसे आगे था, बोला, "हम तुझे ले जाने के लिए आए हैं, कबीर !"

"मुझे ?" कबीर ने आश्चर्य से पूछा।

"हां !" उसने कहा, "तुमने हमारे पंथ को बदनाम किया है। हम तुम्हारी नगरी को भस्म कर देंगे। तुम्हें मार डालेंगे।"

कबीर को हंसी आ गई।

"तू हंसता है ?" एक जोगी चिल्लाया।

कबीर ने व्यंग्य से अपना पद सुनाया :

"मन ना रंगाए, रंगाए जोगी कपड़ा।
आसन मारि मन्दिर में बैठे,
ब्रह्म छांड़ि पूजन लगे पथरा।
कनवा फड़ाय, जटवा बढ़ौले,
दाढ़ी बढ़ाय जोगी होइ गैले बकरा ॥"

"बकवास बन्द करो !" जोगियों के अगुवा ने कड़ककर कहा, "तुम हमारे साथ चलो वरना···"

"वरना क्या ?" लोई अब तक कबीर के पीछे सहमी खड़ी थी, वह आगे आकर कड़क उठी, "जिस मां ने तुम्हें जन्म दिया, उसी को छोड़कर चले आए हो और अब दूसरों को भी यही नसीहत देते हो ? अपने कर्तव्य से भागना कायरता है। तुम कायर हो। तुम्हें कभी भी मुक्ति नहीं मिलेगी।"

"ओ माया, दूर हट !" जोगी ने अपनी लाठी तानते हुए कहा, "देखो, यह माया है ! इसी ने भरमा रखा है संसार को।"

भीड़ शान्त थी। जोगी ने समझा कि उसका तीर निशाने पर बैठा है। वह फिर बोला, "ओ गृहस्थ, काल के रूप में माया तुझको ग्रसे हुए है। तू अल्पज्ञ जीव उस अव्यक्त पुरुष की ज्योति को क्या समझेगा!"

कबीर के घर के आगे जोगियों के समूह और भीड़ को देखकर आसपास के सभी जुलाहे, पासी आदि लाठी-बल्लम लेकर आ पहुंचे। कबीर-पन्थी भी तैयार खड़े थे।

जोगियों ने अपना रंग जमता देखा। उनमें से एक बोला, "कबीर, चलता है या नहीं?"

"नहीं, मुझे तुम जैसे पाखण्डियों के साथ…"

"खबरदार जो आगे कहा!" कुछ जोगियों ने लाठी तानकर एक स्वर में कहा, "वरना…"

"वरना क्या?" एक जुलाहे युवक ने कड़ककर पूछा।

"वरना हम तुम्हारी बस्ती जला देंगे!" जोगी ने आवेश में कहा।

"किसकी मजाल है हमारी बस्ती जलाने की?" युवक ने ललकारा।

देखते-देखते दोनों ओर से लाठियां तन गईं। जोगी लोग तो केवल धमकाकर कबीर को ले जाने आए थे। उन्हें क्या मालूम था कि पूरी बस्ती मरने-मारने को तैयार हो जाएगी। बस्ती के दो-चार लोगों की लाठियां खाते ही वे इस प्रकार भागे जैसे किसान के डर से आवारा पशु खेत से भाग रहे हों।

१५

राम तेरी माया दुन्द मचावै

कमाल अब सयाना हो चला था। माँ के कामों में हाथ बंटाने लगा। लोई ने एक दिन कबीर से कहा—

"कमाल अब बड़ा हो गया है जी!"

"हां, तो?" कबीर ने पूछा।

"मैं चाहती थी, कमाल को थोड़ा पढ़ाया-लिखाया जाए।" लोई ने दबे स्वर में कहा।

"मैं भी चाहता हूं, लोई!" कबीर ने कहा, "मगर कहां भेजोगी? मस्जिद में? जानती हो वे लोग क्या सिखाएंगे कमाल को? कहेंगे हिन्दू काफिर हैं! रोजा और नमाज ही सब कुछ है! बकरे और गाय खाने को अच्छा बताएंगे। और संस्कृत पाठशाला में उसे कोई लेगा ही नहीं—उनकी इमारत को छूत लग जाएगी। उनकी भाषा भी तो हमारे लिए नहीं है। वे लोग उसे देव-भाषा कहते हैं। ब्राह्मणों ने अपनी भाषा का नाम देवताओं की भाषा रख लिया है। अब बताओ, करूं तो क्या करूं। तुम पढ़ी लिखी नहीं, मैं पढ़ा-लिखा नहीं!"

लोई चुप रही।

कबीर ने कुछ सोच-विचारकर कहा, "हां, ध्यान आया। अपने कमाल को किसी मदरसे या पाठशाला में जाने की जरूरत नहीं है।"

"क्यों, क्या ध्यान आ गया जी ?" लोई ने पूछा।

"अपने माधवदास कमाल को हिन्दी-संस्कृत पढ़ाया करेंगे और बिजली खां उर्दू-फारसी। दोनों रोज आते तो हैं ही। कमाल के लिए आज ही पट्टी-बुदके का इन्तजाम कर दूंगा।"

सुनकर लोई खुश हुई; बोली, "यह तो चिराग-तले अंधेरे जैसी बात थी। लो, मुझे ध्यान ही नहीं आया।"

"तुम्हें तो बहुत-सी बातें याद नहीं रहतीं।" कबीर हंसा, "देखो, अब तुम यह भूली जा रही हो कि मुझे आज पैंठ भी जाना है।"

लोई बोली, "मैं ऐसी बेवकूफ नहीं हूं। रोटी तैयार है। गठरी बंधी रखी है। खाओ और जाओ। शाम को पट्टी बुदका जरूर लेते आना। और हां, कलम भी।"

माधवदास और बिजली खां रोजाना आते रहते थे। कभी-कभी उनके साथ और लोग भी आते थे। उनमें कुछ बनजारे और दिसावर में व्यापार करने वाले लोग भी होते थे। उनसे बाहर की दुनिया की खबरें भी मिलती रहती थीं।

एक दिन माधवदास ने बताया, "कल काशी में मुसलमानों का एक जलसा होने वाला है।"

"जलसा ?" कबीर ने पूछा।

"हां," माधवदास ने उत्तर दिया, "कल कसाइयों की मस्जिद में कुछ हिन्दू लोगों को कलमा पढ़ाया जाएगा और उन्हें मुसलमान बनाया जाएगा।"

"और वे लोग खुशी से बन रहे हैं ?" कबीर ने पूछा।

"कैसी बातें कर रहे हैं, गुरुदेव !" माधवदास बोला, "कभी किसी ने खुशी से भी धर्म-परिवर्तन किया है ? वे बेचारे गरीब हैं; उन्हें काजी ने डरा-धमकाकर तैयार कर लिया है।"

दूसरे दिन सूरज की पहली किरण के साथ ही कबीर कसाइयों

की मस्जिद पर पहुंच गया।

कबीर को देखते ही काजी का माथा ठनका। पूछा, "तुम क्यों आए हो ?"

कबीर ने ठहाका लगाया, "वाह काजी साहब, उस दिन पूछते थे, क्यों नहीं आते ? आज पूछते हो, क्यों आए हो ?"

काजी थोड़ा झेंपा फिर स्वर को स्वाभाविक बनाकर उसने पूछा, "तुम तो काफिरों में जा मिले थे, फिर तुम्हारा मस्जिद में क्या काम है ?"

"मैं किसी से नहीं मिला हूं और न किसी को किसी से मिलने दूंगा।" कबीर ने चेतावनी दी, "तुम लोग गरीब हिन्दुओं को इस्लाम का सबक दे रहे हो ! मैं ऐसा नहीं होने दूंगा।"

"तो तुम झगड़ा करने आए हो ?" काजी ने पूछा।

"नहीं।" कबीर बोला, "मैं झगड़ा करने नहीं आया हूं, बल्कि जो खून-खच्चर होने की उम्मीद है, उससे तुम्हें आगाह करने आया हूं। आदमी वही है, जो वक्त रहते चेत जाए। काशी हिन्दुओं का तीरथ है। यहां का राजा भी हिन्दू है, जिसने कैसे भी करके अपनी आजादी को अभी तक कायम रखा है। यहां के हिन्दुओं को यहीं पर जबरदस्ती मुसलमान बनाया जाएगा तो उत्तेजना फैल जाएगी और शहर में फसाद हो जाएगा।"

काजी ने कहा, "हम किसी के साथ जबरदस्ती नहीं कर रहे हैं। जिसे अपनी जान प्यारी है और जो अपनी तरक्की चाहता है, वह खुशी से हमारे मजहब को कबूल कर रहा है। हमारे और उन लोगों के बीच में जो भी आएगा उसे कुचल दिया जाएगा। यह बादशाह सलामत का हुक्म है !"

कबीर बिना कुछ बोले बाहर आ गया और सीधा काशी-नरेश के पास पहुंचा। काशी-नरेश ने कबीर का तन-बदन देखा ... बोले, "कहिए, कैसे आना हुआ ?"

कबीर ने पूरी कहानी सुना दी। काशी-नरेश ने पूछा, "तो हम क्या कर सकते हैं, कबीर ?"

"आप उन्हें बचा सकते हैं, महाराज !" कबीर ने कहा, "प्रजा की रक्षा का भार राजा पर ही तो होता है।"

"वह तो ठीक है !" वीरसिंह ने कहा, "मगर कोई राजी-खुशी से ऐसा करे तो हम क्या कर सकते हैं ?"

"दुनिया में कोई आदमी खुशी से ऐसा नहीं करता!" कबीर ने कहा, "ये सब जोर-जुल्म की बातें हैं।"

"फिर भी हम क्या कर सकते हैं !" काशी-नरेश ने कहा, "जब तक वे लोग स्वयं शिकायत लेकर नहीं आते, हम इस मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकते।"

कबीर उठ खड़ा हुआ और बोला, "मगर महाराज, मैं इस मामले में जरूर हस्तक्षेप करूंगा।"

काशी-नरेश ने व्यंग्य से पूछा, "मगर कबीर तुम में यह हिन्दुत्व कब से जाग उठा ?"

"आप गलत समझ रहे हैं, महाराज !" कबीर ने उत्तर दिया, "अगर आप स्वयं मुसलमानों को जबरदस्ती हिन्दू बनाते, तो मैं उनका भी विरोध करता।"

कहकर कबीर चला गया। काशी-नरेश चिन्ता में डूब गए। दूसरा पहर होने न होते कसाइयों की मस्जिद के सामने लोगों की भीड़ जमा होने लगी।

बिजली खां और माधवदास के साथ कबीर पहुंच गया। भीड़ में खलबली शुरू हो गई। कबीर ने भीड़ की ओर मुंह करके जोर से कहा, "सुनो, भाइयो, सुनो ! आज इस मस्जिद में काजी साहब कुछ हिन्दुओं को मुसलमान बनाएंगे। मैंने उन लोगों से बातें की हैं। मुझे मालूम हुआ है कि काजी उनके साथ जबरदस्ती कर रहे हैं ताकि बादशाह के दरबार में उनका सम्मान ऊंचा

हो सके। वे स्वार्थ के लिए यह सब कर रहे हैं।"

काजी तुरन्त बाहर निकल आया। वह कबीर को एक ओर हटाकर भीड़ से बोला, "याद रखना यह बादशाह सलामत के काम में दखलन्दाजी है! इसका नतीजा अच्छा नहीं होगा।"

तभी काशी-नरेश अपने कुछ दरबारियों के साथ पहुंच गए। काजी की बात सुनते ही उन्होंने कहा, "आपने क्या कहा? क्या आप यह सब बादशाह सिकन्दर लोदी के हुक्म से कर रहे हैं? लाइए, दिखाइए फरमान।"

काजी के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं।

काशी-नरेश ने क्रोध-भरी नजरों से काजी की ओर देखकर कहा, "काजी साहब! काशी धर्मनिरपेक्ष राज्य है! इस पर मेरा शासन है। यहां हरेक को अपना धर्म पालने की स्वतन्त्रता है। यदि किसी पर कोई ज्यादती हुई, तो उसकी रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है। खबरदार, अगर मैंने फिर यह शिकायत सुनी तो आपको दण्ड भुगतना पड़ेगा।"

चारों ओर से "काशी-नरेश की जय!" और "भक्त कबीर की जय!" के नारे गूंजने लगे।

पण्डित काशीनाथ ने अपने आंसू पोंछते हुए उत्तर दिया, "बोलो रुद्रनाथ, तुम भी बोलो—भक्त कबीर की जय!"

१६

जल में घट, घट में जल···

"गुरुदेव, आपकी प्रेरणा का स्रोत क्या है ?" एक दिन भगवान-दास ने पूछा।

"यह करघा।" कबीर ने उत्तर दिया, "यही मेरा प्राण है, इसी में मेरी आत्मा का निवास है।"

वास्तव में कबीर ने ठीक ही कहा था। लोई रोज ताना तान देती थी और कबीर करघे से कपड़ा निकालता और हृदय से पद। शिष्यगण सुनते और दोहराते। कपड़ा तैयार होता रहता और भजन-कीर्तन भी चलता रहता।

बिजली खां और माधवदास के अलावा भगवानदास, सुरत-गोपाल, धर्मदास, तत्वा जीवा, जागूदास आदि अनेक शिष्य हर समय वहीं बैठे रहते। बान्धवगढ़ के राजा वीरसिंह बघेला को जब भी समय मिलता, कबीर की कुटिया में पहुंच जाते।

दिन, पखवारे और महीने बीतते गए। करघे से सैकड़ों थान निकले और चले गए। सैकड़ों पद निकले और हजारों लोगों की जबान पर चढ़ गए। कबीर की ख्याति दोपहर के सूर्य के समान जगमगाने लगी।

एक दिन राजा वीरसिंह बघेला सुनहरी जरी के कामदार थान रेशमी कपड़े में लपेटकर एक दम लाए।

[illegible] ?" कबीर ने उत्सुकतावश पूछा।

बघेला राजा ने कपड़ा खोलकर कबीर के सामने ग्रन्थ रखते हुए उत्तर दिया, "हम सब ने मिलकर आपके पदों और वाणियों का संकलन तैयार किया है, गुरुदेव ! यह वही ग्रन्थ है "

"मैं तो अपढ़ गंवार हूं।" कबीर ने ग्रन्थ पर हाथ फेरते हुए कहा, "कागद मसि छूयो नहीं, कलम लियो नहिं हाथ—मैं इस ग्रन्थ का महत्व क्या समझूं।"

"इसका महत्व तो आगे आने वाली संतति समझेगी, गुरुदेव।" भगवानदास ने उत्तर दिया, "यह संकलन अभी अधूरा है। आत्मा और परमात्मा का क्या सम्बन्ध है, इसे आप बीज-रूप में समझा दें तो एक बहुत बड़ा रहस्य हमारे सामने प्रकट हो जाएगा। उसके बाद ही यह संकलन पूर्ण होगा।"

"मेरे मन में जो बात आई, वही मैंने बीज-रूप में बताई है। अब और क्या बताऊं।"

"ठीक है।" बघेला राजा ने खुश होकर कहा, "हम इस ग्रन्थ को बीजक ही कहेंगे। आप इतना अवश्य बताएं कि आत्मा और परमात्मा का क्या सम्बन्ध है।"

"आत्मा और परमात्मा एक ही है।" कबीर ने उत्तर दिया "सुनो —'जल में घट, घट में जल, बाहर-भीतर पानी। घट फूटा जल जलहिं समाना, जो समझे सो ज्ञानी।' आत्मा और परमात्मा जल के समान हैं और यह शरीर घड़े के समान। यदि घड़े में पानी हो और उसे समुद्र में डाल दिया जाए, तो समुद्र का पानी और घड़े के अन्दर का पानी अलग-अलग रहेगा। अगर घड़ा फूट जाए तो घड़े का पानी भी समुद्र के पानी में मिल जाएगा और फिर घड़े के पानी तथा समुद्र के पानी में कोई अन्तर नहीं रह जाएगा ! इसी प्रकार आत्मा शरीर-रूपी घड़े में बन्द है और परमात्मा समुद्र है। शरीर समाप्त हो जाए तो आत्मा भी परमात्मा में उसी तरह विलीन हो जाएगी जैसे समुद्र के पानी में

घड़े का पानी। बस, यही आत्मा और परमात्मा का रहस्य है।"

"धन्य हो गुरुदेव!" भगवानदास ने गद्‌गद होकर कहा, "आपने हमें इतना जटिल रहस्य कितनी आसानी से समझा दिया।"

सब मौन बैठे एक-दूसरे को देखने लगे। कबीर करघा चलाने लगे।

"गुरुदेव," बघेला राजा ने मौन भंग करते हुए कहा, "यह 'बीजक' अपने पास रखें। हम आपके पदों और बानियों को लिख-कर इसमें जोड़ते रहेंगे।"

"बघेला राजा," कबीर ने कहा, "मुझ गंवार जुलाहे के पास इसे क्यों रखते हो? तुम विद्वान् हो, पढ़े-लिखे हो, अपने पास ही रखो।"

"गुरुदेव!" बिजली खां ने कहा, "यह आपकी सम्पत्ति है। अपने पास रखिए। जनता इससे ज्ञान अर्जित करती रहेगी।"

तभी कमाल दौड़ा-दौड़ा आया और रोता हुआ चिल्लाकर बोला, "बापू!!'

कबीर के सारे शरीर में एक अव्यक्त सिहरन-सी दौड़ गई। वह एकाएक खड़ा होकर बोला, "क्या है बेटे?"

"बापू! अम्मा···" कमाल आगे न बोल पाया। फफक-फफक-कर रोने लगा।

सब खड़े हो गए। पूछने लगे, "क्या हुआ, क्या हुआ?"

कमाल ने रोते-रोते बताया कि अम्मा कुएं से पानी खींचते समय बेहोश हो गई।

सब कुएं की ओर भागे। लोई बेहोश पड़ी थी। बघेला राजा ने उसके ··· के छींटे मारे। कबीर घुटने टेककर लोई ··· ने आंखें खोलीं, अटकते स्वर में बोली, ··· कहा-सुना···माफ···करना···

···ना।

कमाल जोर से रो पड़ा। सब की आंखें गीली हो गईं। कबीर उसी तरह स्थिर-चित्त बैठा रहा।

"मत रो बेटे!" कुछ देर बाद कबीर ने कमाल की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, "वह महान् आत्मा थी। परमात्मा में लीन हो गई।" कमाल ने पिता की गम्भीर मुद्रा देखी। क्षण-भर के लिए उसका रोना रुक गया।

"हां बेटे," कबीर ने उठते हुए कहा, "घड़ा फूट गया है। पानी-पानी में समा गया है। अब बाकी क्या रह गया।

ना मैं धर्मी, नाहो अध

उस दिन काशी अपमान का घूंट पीकर रह गया था। का
नरेश के सामने उसे मुंह की खानी पड़ी थी। जनता
खोखलाहट के सामने उसने चुपचाप खिसकने में ही अपनी
समझो। लेकिन इस अपमान को वह भूला नहीं। वह मौके
तलाश में था। कबीर से अपने अपमान का बदला लेने के
उसका रोयां-रोयां प्रतिशोध की भट्टी के समान जल रहा

आखिर कुछ महीने बाद उसे मौका मिल गया। बाद
सिकन्दर लोदी काशी की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर आया हुआ
काशी ने मौका पाकर वहां जाकर कबीर की शिकायत कर
सिकन्दर लोदी ने काशी-नरेश के पास फरमान भेजा कि कबीर
फौरन शाही छावनी में सिपहसालार के सुपुर्द कर दिया जाए

काशी-नरेश को भय हुआ कि कहीं सिकन्दर लोदी क
पर अत्याचार न करे। स्वामी रामानन्द ने कबीर की रक्षा
भार उन्ही पर छोड़ा था और अब वे कबीर से इतने प्रभा
थे कि उसे इस तरह के जोखिम में नही डालना चाहते थे। उन्
निश्चय कर लिया कि वे कबीर को नही भेजेंगे, चाहे युद्ध
क्यों न करना पड़े।

कबीर को मालूम हुआ तो वह करघा छोड़ सीधे काशी-न
के पास जाकर बोला, "महाराज! मेरे कारण युद्ध नही ह
चाहिए। मैं बादशाह सिकन्दर लोदी से मिलूंगा। देखूंगा,

कबीर शान्त खड़ा रहा। लोगों ने सुना तो चिल्लाने लगे, "यह जुल्म है! अन्याय है!" इन आवाजों ने बादशाह के कान के पर्दे फाड़ने शुरू कर दिए। वह चिल्लाया, "बकवास बन्द करो!"

कबीर ने कहा, "यह बकवास नहीं, सच है। इतना बड़ा सच कि आज से पहले आपको इसका सामना करने का मौका ही नहीं मिला। आप जनता की इस आवाज को नहीं दबा सकते!"

"इन्हें कुचल दो!" बादशाह गरज पड़ा। उसके हाथ क्रोध से कांपने लगे थे।

सिपहसालार ने बादशाह के निकट जाकर धीमे-से कहा, "जल्दबाजी न की जाए जहांपनाह। बाहर लाखों लोग हथेली पर जान लिए खड़े हैं। इसके अलावा काशी-नरेश और उसके आसपास के राजाओं की फौजें भी तैयार हैं। जैसे ही यहां कुछ हुआ, बस, कयामत हो आई समझें!"

बादशाह को कबीर की इतनी लोकप्रियता का ज्ञान न था। उसने कहा, "हाथी अभी न खोला जाए। हम कबीर से अकेले में मिलेंगे।"

बात की बात में दरबार खाली हो गया। बादशाह ने कबीर से पूछा, "तुम मुसलमान होकर काफिरों का साथ देते हो और उन्हें सल्तनत के खिलाफ भड़काते हो!"

"यह सब झूठ है!" कबीर ने कहा, "मैं सल्तनत के किसी काम में दखल नहीं देता। न मैं काफिर हूं, और न किसी को काफिर समझता हूं।"

"तो तुम इस्लाम को मानते हो?" बादशाह ने पूछा।

"बस, वहीं तक मानता हूं जहां तक उसमें कोई बुराई नहीं है।" कबीर ने कहा।

"और बुराई कहां से शुरू होती है उसमें?"

"जहां जीवों की हत्या और जबरदस्ती धर्म बदलने की बातें

शुरू होती है।" कबीर ने उत्तर दिया।

"तुम खुदा को मानते हो?" बादशाह

"मैं खुदा और राम में कोई फर्क नहीं

जो लोग हैं, वे सब दोनों को मानने वाले हैं

बादशाह ने समझाते हुए कहा, "कुछ

मुसलमान हो और तुम्हें सल्तनत के साथ

फिर सल्तनत भी तुम्हारा खयाल करेगी।

अच्छे शायर भी हो। हम तुम्हें अपने दरबार

जागीर बख्श दी जाएगी। तुम्हारा बुढ़ापा सु

इसके बदले में तुम्हें सिर्फ इतना कहना होगा

सबसे अच्छा है, मैंने उस धर्म को आज समझ

यह सौदा मंजूर है तुम्हें?"

कबीर ने नफरत से भरकर थूक दिया औ

की जागीर उन लोगों के लिए है, जो बाहर सां

तो वहीं हुकूमत कर सकता है। मगर कबीर तो

था, फक्कड़ ही मरेगा। उसे खरीदने वाले प

वह न पहले बिका है, न अब बिकेगा।"

"तो तुम खून-खच्चर कराओगे ही?"

"मैं नहीं, आप इस पर आमादा हैं।" कबी

"मैं तो शान्त भाव से अपने करघे पर बैठा मजू

मैं किसी से झगड़ा करने तो नहीं गया? किसो

नहीं?"

बादशाह सोच में पड़ गया। तभी सिपहस

दी कि आसपास के राजाओं की फौजें बढ़ी

ह ने कहा, "कबीर को छोड़ दिया अ

मुसलमान ही है।"

कर जश्न मनाया। इस घटना को लेकर तरह-तरह की कहानियां गढ़ी गईं। कोई कहता था, "हाथी छोड़ दिया था, मगर वह कबीर को देखकर दोनों पैरों पर खड़ा हो गया। उसने अपनी सूंड इस तरह उठा ली की जैसे भगवती महालक्ष्मी के हाथी नमस्कार करते हैं।"

कोई कहता, "कबीर को बादशाह ने जलती हुई भट्टी में फेंकवा दिया था, मगर भट्टी की आंच कबीर को जला ही न सकी।"

कोई कहता है, "बादशाह ने कबीर को जमीन में दफन करवा दिया, था मगर जमीन अपने-आप फट गई और कबीर को ऊपर उठा दिया।"

मतलब यह कि हर तरफ तरह-तरह की अफवाहें फैलने लगीं। कबीर के अनुयायी और मित्र इन समाचारों को सुन-सुन कर प्रसन्न होते, क्योंकि इस प्रकार उनके नेता को भगवान का अवतार साबित किया जा रहा था।

लेकिन कबीर ने यह सब सुना तो दुःखी हुआ। अपने बुढ़ापे में इस दुर्गति की उसे आशा नहीं थी। वह जीवन-भर जिस अवतार-वाद का विरोधी रहा, अब स्वयं उसे ही उसका शिकार होना पड़ रहा था।

उसने माधवदास से कहा, बिजली खां को समझाया कि वे इन अफवाहों का निराकरण करें; मगर उन दोनों की आंखों पर भी जैसे स्वार्थ की पट्टी बंध गई थी। दोनों ही कबीर को अपनी-अपनी ओर खींचने में व्यस्त थे।

१८

यह जग अंधा, मैं केहि समुझावों

पढ़े-लिखे और समझदार लोग कहते : "कबीर ज्ञानी है, विद्वान है। उसने जीवन का मर्म समझ लिया है, आत्मा और परमात्मा का रहस्य जान लिया है। उसकी वाणी में जादू है। हवा का रुख उसकी बात का इन्तजार करता है। वह जिधर चाहे, जनता को मोड़ सकता है।"

अपढ़ और गरीब लोग कहते—"कबीर भगवान है। बेसहारा लोगों का सहारा है, बेजबानों की जबान है, कमजोर और लाचार लोगों का सम्बल है। वह हमारा रक्षक है, खुदा है, राम है, हमारा भगवान है।"

हिन्दू कहते—"कबीर हमारा है। उसने हमारे हिन्दू धर्म की रक्षा की है, हजारों लाचार हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनने से बचाया है, हमारी और हमारे धर्म की रक्षा की है।"

मुसलमान कहते—"कबीर जैसा भी है, हमारा है। वह सूफी है, मुसलमान साधु है। उसका बाप मुसलमान था, मां मुसलमान थी।"

लेकिन कबीर इन सब विवादों से दूर—बहुत दूर अपने में रहता। कोई चाव नहीं रहा। घर की स्थिति पहले न ही थी। कबीर बूढ़ा हो गया था, फिर भी वह बराबर बैठा और कपड़ा बुनते-बुनते गाता रहता। शिष्यगण

बैठे रहते। राजा वीरसिंह बघेला, बिजली खां, माधवदास आदि शिष्य कबीर के पदों को लिखते रहते और 'बीजक' में शामिल करते रहते। 'बीजक' का आकार काफी बढ़ गया था।

कमाल घर के काम-काज में लगा रहता।

अभी पौ फटी थी। कबीर दैनिक कार्य से निवृत्त होकर करघे पर बैठ गया था। शिष्यगण नहीं आए थे। वृद्धावस्था के कारण कबीर की आंखें काफी कमजोर हो गई थीं। उसे टटोल-टटोलकर ढरकी इधर से उधर चलानी पड़ती थी।

कमाल ताना डाल रहा था। कबीर चुपचाप ढरकी हाथ में लिए किसी गम्भीर चिन्ता में खोया था।

"कमाल!" उसने पुकारा।

"हां, बापू!" कमाल ने उत्तर दिया।

"मुझे तेरी बहुत फिक्र है, बेटे!"

"किस बात को बापू?"

"मेरे बाद तेरा क्या होगा? तू अकेले कैसे रह सकेगा? सोचता हूं, कहीं तेरा विवाह कर दूं तो फिक्र दूर हो। पर हम गरीबों को कौन पूछता है।" कबीर ने चिन्तित होकर कहा।

"मेरी फिक्र मत करो, बाप।" कमाल बोला, "देखते नहीं, इतना बड़ा हो गया हूं। घर के सब काम कर लेता हूं। इस घर में रहकर करघा चलाऊंगा, कमाऊंगा ... और अपने बाप के बनाए गीत गाऊंगा।"

"सो तो ठीक ... भी ऐसा पैदा नहीं ... बड़े-बूढ़ों की यही ... पड़ा; एक यह

... कमाल बोला,

"अभी तो मौजूद है।" कबीर बोला, "पर अब
मुझे मगहर ले चलो बेटे, मैं काशी में प्राण नहीं छो
"क्यों बापू ? और लोग तो मरने के वक्त दूर-दू
आते हैं।" कमाल ने पूछा, "और आप यहां से जा
करते हैं ? कहते हैं, काशी में मरने वाले को स्वर्ग प्राप्त
और बेटा, यह भी कहते हैं कि मगहर में मरने
हमेशा नरक मिलता है—मैं नरक में ही जाना चाहता
"ऐसा क्यों, बापू ?" कमाल ने चकित होकर पूछा।
"इसलिए कि काशी और मगहर के बीच की जो
वह पट जाए।" कबीर ने उत्तर दिया, काशी और मग
कोई अन्तर नहीं है :

का कासी, का मगहर ऊसर,
हृदय राम बस मोरा।
जो कासी तन तजइ कबीरा,
रामहिं कौन निहोरा॥"

तभी अन्दर से हल्की खट की आवाज आई।
"कौन ?" कबीर ने चौंककर पूछा।
कमाल अपने आप को बात को ध्यान से सुनता हुआ करघे
र उलझे धागे को ठीक करने में व्यस्त था। उसने तेजी से
टकर कमरे की ओर देखा।
"बापू !" कमाल के मुंह से आश्चर्य-भरी चीख निकल गई।
उसने देखा—भगवानदास लाल कपड़े में लिपटा बीजक लेकर
भाग रहा है। उसने करघा छोड़कर भगवानदास का पीछा किया।
कबीर को समझ में कुछ न आया। उसने पूछा, "क्या हुआ
बेटे ?"
लेकिन कमाल तब तक काफी दूर जा चुका था।
कबीर उठ खड़ा हुआ। जिधर कमाल भाग...

रहने दो।"

"लेकिन उसने चोरी क्यों की ?" माधवदास ने क्रोध-भरे स्वर में कहा, "बीजक आपकी सम्पत्ति है। आपके पास रहनी चाहिए। हम अभी उसे ढूढते हैं।"

"हां, हां, उसे फौरन पकड़ना चाहिए।" सब ने एक स्वर में कहा और भगवानदास को ढूढ़ने चल दिए।

कमाल और कबीर अकेले रह गए।

"कमाल !" कबीर ने कहा।

"हां, बापू !" कमाल ने आंसू पोंछते हुए कहा।

"चलो बेटे, मुझे मगहर ले चलो।" कबीर ने कहा, "अब यहां दिल नहीं लगता। अपना ही शिष्य चोर हो गया। अपने ही शिष्य आपस में लड़ते है, झगड़ते हैं। अब यहां नहीं रहा जाता।"

"चलो बापू, अब मैं भी यहां नहीं रहना चाहता। अभी चले चलो।" कमाल ने कहा और जरूरी सामान लेने के लिए अन्दर चला गया।

और जब सभी शिष्य तथा काशी के अनेक सम्भ्रान्त व्यक्ति बिना बीजक लिए, हताश होकर कबीर की कुटिया में लौटे, तब तक कबीर और [illegible] काशी की सीमा से बाहर पहुंच चुके थे।

१६

रहना नहिं देस बिराना है

मगहर छोटा-सा गांव था। पण्डितों ने अफवाह फैला र
कि जो मगहर में मरता है, उसका अगला जन्म ग
योनि में होता है : कबीर ने इसे जीवन-भर नहीं माना।
हमेशा सभी प्रकार के अन्धविश्वासों के विरुद्ध बोलता
था। मगहर के बारे में भी उसने अनेक बार कहा था : "
काशी महादेवजी की है तो मगहर किसका है ? क्या मह
सर्वव्यापी नहीं है ? काशी और मगहर में कोई अन्तर नहं

लेकिन उसके मगहर पहुंचने का समाचार सारे इला
जंगल की आग की तरह फैल गया। रात-दिन उसके दर्शन क
के लिए हजारों लोगों का तांता लगा रहता। काशी तक स
चार पहुंच गया था। अनेक शिष्य आने लगे। कबीर प्रायः ग
करता :

"नैहरवा हमका नहीं भावे।
साईं की नगरी परम अति सुन्दर, जहां कोई जाइ न आव
चांद सुरुज जहं पवन न पानी, को संदेश पहुंचावै
दरद यह साईं को सुनावै

कमाल निरन्तर बापू की सेवा में लगा रहता। कबीर जि
गीतों को गुनगुनाता, उनसे ही कमाल को आभास होने लगा f
बापू अब इस पार्थिव संसार में नहीं रहना चाहते। उसके शरी
में सिहरन दौड़ जाती, पर वह चुप रहता।

एक दिन प्रातः ही कमाल दूध का गिलास लेकर आया तो
देखा, कबीर बैठे हुए गुनगुना रहे हैं। आंखें बन्द हैं। कोरों में

तुम इस काबिल नहीं हो कि इस महापुरुष की मिट्टी भी छू सको। जाओ, चले जाओ यहां से! प्रेम और भक्ति के नाम पर आदर और श्रद्धा के नाम पर, तुम उस पुण्यात्मा का अपमान कर रहे हो। तुम उस आज़ाद परिन्दे की लाश के साथ खिलवाड़ करना चाहते हो। नहीं, मैं यह हरगिज नहीं होने दूंगा। मैं तुम्हें उसकी मिट्टी छूने तक न दूंगा। जाओ, चले जाओ यहां से! तुम उसे न जला सकते हो और न दफना सकते हो—जाओ, भाग जाओ!"

भीड़ में सन्नाटा छा गया। कमाल पागल की भांति दरवाजे तक गया। उसने दरवाजा बन्द करके कुंडी चढ़ा दी। फिर हजारों लोगों की भीड़ को चीरता चला गया।

बाद में सुना गया कि राजा वीरसिंह बघेला और बिजली खां में युद्ध नहीं हुआ। सबने फैसला किया कि कबीर के शव को आधा-आधा बांट लिया जाय। आधे को हिन्दू जलाएं और आधे को मुसलमान दफना दें। लेकिन जब राजा वीरसिंह बघेला और बिजली खां कुण्डी खोलकर अन्दर गए तो वहां कबीर के शव की जगह फूल पड़े हुए थे। दोनों ने वे फूल ही आपस में बांट लिए।

कमाल ने सुना तो उसे खुशी हुई—चलो, बापू ने अपनी मिट्टी तक को हाथ नहीं लगाने दिया।

और जब वर्षों बाद कमाल ने सुना कि बिजली खां ने बस्ती जिले में आमी नदी के किनारे कबीर का रोजा बनवाया है तो वह रो पड़ा आकाश की ओर ताककर बोला, "देखा बापू, तुम्हारे शिष्यों ने आखिर मिट्टी पलीद करके ही छोड़ी!" □